प्रसार दूत

कृषि विज्ञान की अग्रणी पत्रिका

जून 2022

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानान्तरण केन्द्र

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान

नई दिल्ली–110012

संपादकीय

किसान भाइयों, मानसून का आगमन बड़े धूमधाम के साथ हो चुका है। हमारे देश में मानसून का बेसब्री से इंतजार किया जाता है क्योंकि वह अपने साथ हरियाली और खुशहाली का वातावरण लाता है। लेकिन कुछ वर्षों से कई राज्यों में स्थिति उलट गई है और मानसून के कारण तबाही देखने को मिली है। इस पर दो राय हो सकती है कि यह तबाही मानसून की वजह से है या कुप्रबंधन की वजह से, लेकिन सच्चाई यही है कि असम से लेकर महाराष्ट्र, गुजरात, मध्यप्रदेश और यहाँ तक कि राजस्थान में भी अचानक भारी वर्षा की स्थिति देखने को मिल रही है। लोग त्राहि–त्राहि कर रहे हैं कि हे प्रभु, अब और बारिश नहीं चाहिए। वहीं दूसरी ओर पूर्वी उत्तरप्रदेश में लोग अभी भी इसकी बाट जोह रहे हैं। वहाँ जिन किसानों ने समय पर धान की रोपाई कर दी थी, उन्हें डीजल–पंपों से सिंचाई देनी पड़ रही है, ताकि किसी तरह फसल सुरक्षित रह सके।

इसका संपूर्ण दोष यदि जलवायु परिवर्तन को देना उचित नहीं है। आँकड़े बताते हैं कि मोटे तौर पर वार्षिक बारिश उतनी ही है, जितना पहले रहती थी। अंतर केवल इतना है कि हाल के वर्षों में बारिश का वितरण असमान हो गया है, अर्थात जो पानी समूची वर्षा ऋतु में चार महीनों के दौरान बरसता था, अब वह कुछ ही दिनों में बरस जाता है, लिहाजा धरती को जल सोखने के लिए पूरा समय नहीं मिल पाता। आधुनिक विकास में जल संचयन, मेंड़बंदी और जलनिकासी की भरपूर उपेक्षा की गई, जिससे तेज वर्षा का जल फसल को नुकसान पहुँचाते हुए निकलता है। यह औद्योगिकी करण और शहरीकरण के अनुषंगी प्रभाव हैं, जिनसे निपटने के लिए सरकार द्वारा प्रभावी हस्तक्षेप की आवश्यकता है।

असमान वर्षा कृषि के लिए भी बहुत बड़ी चुनौती है। इससे निपटने का एक उपाय यह हो सकता है कि किसान भाई खेती की प्रक्रियाओं का नियंत्रण स्वयं के पास रखें। प्रयास करें कि कृषि कुदरत के भरोसे कम से कम रहे, उदाहरण के लिए सिंचाई की वैकल्पिक व्यवस्था हो, उत्तम जल निकास हो, कृषि में पर्याप्त मशीनीकरण हो। यद्यपि कृषि प्रक्रियाओं में नियंत्रण एक परिकल्पना है, जिसे पूर्णतः प्राप्त करना कठिन है, परंतु इस दिशा में प्रयास अवश्य होना चाहिए। नियंत्रण जितना अधिक होगा, जोखिम उतना ही कम होगा। कृषि को नीलगाय और आवारा पशुओं से सुरक्षा के लिए बाड़बंदी जरूरी है। अगला कदम नेटहाउस और पॉलीहाउस जैसी संरक्षित संरचनाएँ स्थापित करना है, जिनसे मौसम के उतार चढ़ाव के साथ कीटों और व्याधियों से भी रक्षा होती है, और दवाओं का खर्च भी बचता है। आपको मालूम होगा कि हाईटेक नर्सरी में पौधों को उगाने के लिए मिट्टी के बजाए अन्य माध्यमों में उगाए जाते हैं। आज व्यावसायिक रूप से खेती हाइड्रोपोनिक्स और एयरोपोनिक्स द्वारा भी संभव है। इस वर्ष पूसा कृषि विज्ञान मेला 2022 में इस पर एक तकनीकी सत्र भी आयोजित किया गया था, जिसमें इस उद्योग के विशेषज्ञों और उपयोग करने वाले किसानों ने अपने अनुभव साझा किए, जिनकी रिकॉर्डिंग संस्थान के यूट्यूब चैनल में उपलब्ध हैं, जहाँ से किसान भाई इसे देख सकते हैं।

हमारे देश में सीमांत और लघु किसानों के लिए कोई संरचना या स्थापनाएँ निर्मित करना मुश्किल होता है, क्योंकि इनमें लागत आती है, और उनके पास पूँजी का अभाव होता है। इस दिशा में सरकारी प्रयास सराहनीय हैं, जिनके अंतर्गत बाड़बंदी, सौरपंप, नेटहाउस, सूक्ष्म सिंचाई सिस्टम आदि बनाने के लिए अनेक प्रकार से अनुदान और वित्तीय सहायताएँ दी जाती हैं, जिनकी दरें अलग–अलग राज्यों में भिन्न–भिन्न हो सकती हैं।

किसान भाइयों, कदन्न (मोटे अनाज) दशकों से हमारे भोजन का हिस्सा थे, वे अब हमारी थाली से गायब होते गए। इसका मुख्य कारण आधुनिक पीढ़ी की खान–पान की रुचि में बदलाव आया है। यह पीढ़ी मोटे अनाजों को पसंद नहीं करती। इसके साथ ही देशभर में व्यावसायिक खेती और गेहूँ–चावल पर जोर दिया गया, जिससे उनका रकबा बढ़ता गया और मोटे अनाजों का घटता गया। आज दुनियाभर के वैज्ञानिकों ने महसूस किया कि कदन्न पोषक तत्वों से भरपूर और हमारे स्वास्थ्य के लिए बहुत जरूरी होते हैं। उन्होंने पाया कि उच्च और मध्यमवर्गीय जीवन में जीवनशैली संबंधी रोगों का मुख्य कारण खान–पान में है। यदि हम अपने रोजमर्रा के भोजन में कदन्न का उपयोग करें, तो स्वास्थ्य में काफी हद तक सुधार आ सकता है। जैसे–जैसे इस बारे में लोगों की जानकारी बढ़ रही है, वैसे–वैसे समाज में ऐसा उपभोक्ता वर्ग तैयार हो रहा है जो अच्छे दामों पर कदन्न खरीदने की इच्छा रखता है। इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखकर दुनियाभर में वर्ष 2023 को अंतरराष्ट्रीय कदन्न वर्ष के रूप में मनाया जाएगा।

भावी वैश्विक मांग को संज्ञान में लेते हुए हमारे संस्थान ने भी कदन्न उत्पादन की तकनीकी का प्रचार–प्रसार करने का निश्चय किया है। प्रसार दूत के इस अंक में भी हमने बाजरे के बारे में एक आलेख शामिल किया है। इसके साथ ही यहाँ खरीफ फसलों एवं समसामयिक विषयों पर पोषक तत्वों से भरपूर बाजरा के मूल्य संवर्धित उत्पाद, मूंग : खरीफ की एक मुख्य दलहनी फसल, मूंग की उत्पादकता को प्रभावित करने वाले कारक तथा उनका टिकाऊ समाधान, उत्तर भारत में सोयाबीन की खेती की संभावनाएं एवं उन्नत उत्पादन तकनीक, गन्ने की फसल में समेकित कीट प्रबन्धन, खरीफ फसलों के प्रमुख कीट, उनका निदान एवं प्रबंधन रणनीतियाँ, खरीफ फसलों के खरपतवार एवं उनका प्रबंधन, धान के कीटों का समेकित कीट प्रबंधन, नर्सरी (पौधशाला) में सूत्रकृमि की समस्या और उसका प्रबंधन, संरक्षित खेती – एक वैज्ञानिक और आधुनिक खेती, अमरूद में फसल नियंत्रणः विधि एवं सलाह, बटन मशरूम की आधुनिक खेती आलेख भी शामिल किए हैं। उम्मीद है यह अंक आपकी अपेक्षाओं पर खरा उतरेगा। यह अंक कैसा लगा, इस बारे में अवश्य अवगत कराएँ।

संपादक

जून 2022

प्रसार दूत

वर्ष 27 | 2022 | अंक-2

संरक्षक

डॉ. अशोक कुमार सिंह

निदेशक

डॉ. बी.एस. तोमर

कार्यवाहक संयुक्त निदेशक (प्रसार)

प्रधान सम्पादक

डॉ. जे.पी.एस. डबास

सम्पादक

डॉ. एन.वी कुंभारे

सम्पादक मंडल

डॉ. राजीव कुमार सिंह

डॉ. गोगराज सिंह जाट

डॉ. हरीश कुमार

डॉ. योगेन्द्र प्रताप सिंह

श्री आनन्द विजय दुबे

तकनीकी सहयोग

श्री विजय सिंह जाटव

श्री लक्खी राम मीणा

श्री राजेश सिंह

शुल्क और लेख भेजने एवं पत्रिका मंगाने का पता

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान

नई दिल्ली–110012

फोनः 011–25841039

पूसा एग्रीकॉमः 1800118989 (टोल फ्री)

ई–मेंलः incharge_atic@iari.res.in

वेबसाइटः www.iari.res.in

विषय सूची | पृष्ठ संख्या

सम्पादकीय

1. पोषक तत्वों से भरपूर बाजरा के मूल्य संवर्धित उत्पाद 1
2. मूंग : खरीफ की एक मुख्य दलहनी फसल 4
3. मूंग की उत्पादकता को प्रभावित करने वाले कारक तथा उनका टिकाऊ समाधान 8
4. उत्तर भारत में सोयाबीन की खेती की संभावनाएं एवं उन्नत उत्पादन तकनीक 15
5. गन्ने की फसल में समेकित कीट प्रबन्धन 19
6. खरीफ फसलों के प्रमुख कीट, उनका निदान एवं प्रबंधन रणनीतियाँ 24
7. खरीफ फसलों के खरपतवार एवं उनका प्रबंधन 30
8. धान के कीटों का समेकित कीट प्रबंधन 35
9. नर्सरी (पौधशाला) में सूत्रकृमि की समस्या और प्रबंधन 43
10. संरक्षित खेती – एक वैज्ञानिक और आधुनिक खेती 46
11. अमरूद में फसल नियंत्रणः विधि एवं सलाह 48
12. बटन मशरूम की आधुनिक खेती 50

वार्षिक शुल्क ₹ 150/– मनीआर्डर द्वारा | एक प्रति मूल्य ₹ 40/–

पोषक तत्वों से भरपूर बाजरा के मूल्य संवर्धित उत्पाद

एल. एन. यादव, कविता बिष्ट एवं पूजा गुप्ता सोनी
कृषि विज्ञान केंद्र (भा.कृ.अनु.सं.) शिकोहपुर, गुरुग्राम

बाजरा उत्पादन में, भारत का विश्व में प्रथम स्थान है। यह भारत में राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, गुजरात, महाराष्ट्र व पश्चिमी उत्तर प्रदेश में मुख्यतः उगाया जाता है। इसके तने व पत्तियों का उपयोग पशुओं के लिए आहार के रूप में एवं झोपड़ी आदि बनाने में किया जाता है। अध्ययनों से पता चला है कि बाजरा हृदय संबंधी बीमारियों, कैंसर, मधुमेह और चयापचय सिंड्रोम के खिलाफ सुरक्षात्मक है। यह आवश्यक आहार फाइबर, प्रोटीन, ऊर्जा, खनिज, विटामिन और एंटीऑक्सीडेंट प्रदान करता है।

बाजरा का पोषक मान

बाजरा पोषक तत्वों से भरपूर होने के कारण विभिन्न स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है। प्रति 100 ग्राम बाजरा में 361 किलो कैलोरी ऊर्जा, 12.4 ग्राम नमी, 5 ग्राम वसा, 2.3 ग्राम खनिज लवण, 11.3 ग्राम कुल आहार रेशा, 67.5 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 42.0 मिलीग्राम कैल्शियम, 296.0 मिलीग्राम फॉस्फोरस और 8.0 मिलीग्राम आयरन होता है, जो की गेहूं एवं चावल में मौजूद पोषक तत्वों से अधिक या उनके समतुल्य है। बाजरा कार्बोहाइड्रेट घटकों में स्टार्च (62.8–70.5%), घुलनशील शर्करा (1.2–2.6%) एवं आहार रेशा शामिल है। बाजरा ग्लूटेन फ्री होता है। बाजरा में सामान्यतः 9–13% प्रोटीन होती है। बाजरा में आवश्यक एमिनो एसिड की अधिक मात्रा होने के साथ सुपाच्य प्रोटीन का अच्छा स्रोत है। बाजरे में 5% वसा होती है जिसका 75% असंतृप्त वसा के रूप में होता है। बाजरा खनिज लवणों का अच्छा स्रोत है। इसमें पर्याप्त मात्रा में कैल्शियम (42.0 मि.ग्रा.), फॉस्फोरस (296.0 मि.ग्रा.), मैग्नीशियम (137. 0 मि.ग्रा.) और आयरन (8.0 मि.ग्रा.) होता है। मिट्टी की संरचना एवं प्रकृति के आधार पर खनिज लवण निर्भर करते हैं। बाजरा थाइमिन (0.33 मि.ग्रा.), राइबोफ्लेविन (0.25 मि. ग्रा.) और नायसिन (2.3 मि.ग्रा.) विटामिन्स का अच्छा स्रोत है। उच्च वसा के कारण बाजरा घुलनशील विटामिन ई (23 मि.ग्रा./100 ग्रा.) का अच्छा स्रोत है। इसके कारण बाजरा एंटीऑक्सीडेंट के रूप में ट्राइग्लिसराइड को खराब होने से रोकता है।

प्रमुख अनाजों की तुलना में बाजरा की पोषण संरचना

पोषक तत्व	बाजरा	गेंहू	चावल
नमी (ग्राम)	12.4	12.8	13.7
ऊर्जा (किलो कैलोरी)	361	346	345
प्रोटीन (ग्राम)	11.6	11.8	6.8
कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	67.5	71.2	78.2
वसा (ग्राम)	5.0	1.5	0.5
खनिज लवण (ग्राम)	2.3	1.5	0.6
कुल आहार रेशा (ग्राम)	11.3	1.9	0.2
कैल्शियम (मिलीग्राम)	42.0	30.0	10.0
फॉस्फोरस (मिलीग्राम)	296.0	298.0	160.0
मैग्नीशियम (मिलीग्राम)	137.0	138.0	64.0
आयरन (मिलीग्राम)	8.0	3.5	0.7
थाइमिन (मिलीग्राम)	0.33	0.45	0.06
राइबोफ्लेविन (मिलीग्राम)	0.25	0.17	0.06
नायसिन (मिलीग्राम)	2.3	5.5	1.9

बाजरा के स्वास्थ्य लाभ

1. **पाचन में सुधार करना:** बाजरा फाइबर से भरा होता है। फाइबर से भरपूर खाद्य पदार्थ आपके पाचन तंत्र के लिए बहुत अच्छे होते हैं। यह कब्ज की समस्या से निजात दिलाकर भोजन को पचाने में मदद करता है। यह गैस, पेट दर्द, ऐंठन, अल्सर, एसिडिटी, सूजन और यहां तक कि पेट के कैंसर जैसे कई पाचन मुद्दों को रोकने में मदद करता है।
2. **कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रित रखना:** बाजरे में मौजूद फाइबर तत्व कोलेस्ट्रॉल को कम करने में मदद करते हैं। फाइबर वास्तव में शरीर से बैड कोलेस्ट्रॉल को समाप्त करता है और गुड कोलेस्ट्रॉल के प्रभाव को

बढ़ाता है। यह आपकी धमनियों को जमने से रोकता है और आपके हृदय को हृदय रोग से बचाता है।

3. **दिल को स्वस्थ रखनाः** बाजरा मैग्नीशियम से भरपूर होता है, यह आपके रक्तचाप को कम करके आपके हृदय प्रणाली को मदद करता है, जो बदले में दिल का दौरा या स्ट्रोक की संभावना को कम करने में मदद करता है। इसके अलावा, बाजरे में उच्च मात्रा में पोटेशियम होता है जो इसे एक अच्छा वासोडिलेटर बनाता है। यह समग्र रक्तचाप को कम करने में भी मदद करता है।

4. **मधुमेह नियंत्रित करनाः** बाजरे के आटे का इस्तेमाल मधुमेह जैसी बीमारी को कम करने में मदद करता है। बाजरे में मैग्नीशियम तत्व पाए जाते हैं जो टाइप 2 मधुमेह को कम करने में मदद करते हैं। मैग्नीशियम एक ऐसा महत्वपूर्ण मिनरल है जो शरीर में इंसुलिन और ग्लूकोज़ की क्षमता बढ़ाने में मदद करता है। डायबिटीज के मरीजों को भरपूर मात्रा में मैग्नीशियम युक्त आहार लेने चाहिए। साथ ही बाजरे का ग्लाइसेमिक इंडेक्स कम होता है जिस कारण यह अचानक से ब्लड शुगर लेवल बढ़ने नहीं देता है। बाजरा दो तरह के कार्बोहाइड्रेट्स से भरपूर होता है जो जल्दी से पचते नहीं हैं– फाइबर और नॉन– स्टार्ची पॉलीसेकेराइड। यह दोनों ब्लड शुगर लेवल सामान्य बनाए रखने में मदद करते हैं। जिससे डायबिटीज को कंट्रोल करने में मदद मिलती है।

5. **विषाक्त पदार्थों को बाहर निकालनाः** बाजरे को खाने का एक और बड़ा फायदा यह है कि यह आपके शरीर को विषाक्त पदार्थों से मुक्त करता है। बाजरे में पाए जाने वाले एंटीऑक्सीडेंट तत्व शरीर से, खास तौर पर लिवर और किडनी से विषाक्त पदार्थों को निकालने में मदद करते हैं। बाजरे में मौजूद एंटीऑक्सीडेंट पाचन क्रिया को स्वस्थ रखते हैं और यह मल के साथ शरीर की गंदगी को बाहर निकालकर शरीर को विषाक्त पदार्थों से मुक्त करने में भी मदद करते हैं। शरीर से विषाक्त पदार्थों के निकलने से लिवर और किडनी स्वस्थ रहते हैं तथा इम्यून सिस्टम भी मजबूत होता है।

6. **वजन नियंत्रित करनाः** बाजरे में प्रोफेन तत्व मौजूद होता है जो एक अमीनो एसिड है। यह अधिक भूख लगने की समस्या को कम करता है। कम भूख लगने की वजह से अधिक वजन को नियंत्रित किया जा सकता है। बाजरा से बनाया गया कोई भी व्यंजन बहुत देर तक पेट को भरा हुआ रखता है, जिससे भूख नहीं लगती है। इसमें मौजूद फाइबर वजन को नियंत्रित रखने में कारगर है।

बाजरा के मूल्य संवर्धित उत्पाद

यदि बाजरे के उत्पाद सुगमता से उपलब्ध होने लगे तो कुपोषण को काफी हद तक दूर किया जा सकता है। बाजरे के आटा उत्पाद जल्दी खराब हो जाते हैं, अतः आटा को लंबे समय तक सुरक्षित रखने हेतु ब्लाँचिंग तकनीक उपयोग में ली जाती है। इस तकनीक के तहत बाजरे को कपड़े की पोटली में बांधकर 1 से 2 मिनट तक उबलते पानी में डूबते हैं, तत्पश्चात तुरंत ठंडे पानी में डुबोकर निकाल लेते हैं।बाजरे को धूप में अच्छे से सुखा कर आटा तैयार कर लें। इस प्रकार तैयार बाजरे के आटे को लंबे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है। अंकुरित बाजरा को भी फ्रिज में रखकर चार–पांच दिन तक काम में लिया जा सकता है। परंपरागत रूप से बाजरे की रोटी, खिचड़ी, राबड़ी व चूरमा बनाकर खाया जाता है। बाजरा के निम्न उत्पाद बनाकर बाजरे का उपभोग एवं लोकप्रियता को और भी बढ़ाया जा सकता है।

1. बाजरा बिस्किट

सामग्रीः बाजरा आटा 1 कटोरी, दूध 2 बड़ी चम्मच, बेकिंग पाउडर 4 छोटी चम्मच, अमोनिया पाउडर 4 छोटी चम्मच, वनीला एसेन्स 3–4 बून्द, पिसी हुई चीनी व घी आवश्यकतानुसार।

विधिः सबसे पहले आटे में बेकिंग पाउडर डालकर अच्छी तरह से छान लें। फिर तेल या घी लेकर उसमें पिसी हुई चीनी मिलाकर फेंटें। इसमें चीनी पूर्ण रूप से पिघल कर मिक्स हो जानी चाहिए। इसके बाद वनीला एसेन्स व अमोनिया पाउडर डालकर दूध की सहायता से आटा गूंथ ले। फिर 1 इंच मोटाई रखते हुए आटे को बेले। अब इस रोटीनुमा आकार से बिस्किट कटर की सहायता से अंडाकार या गोल या चौकोर आकार में बिस्किट काट ले। फिर ओवन में 180 डिग्री तापमान पर 15–20 मिनट तक बेक कर लेवें।

2. बाजरा केक

सामग्रीः बाजरा आटा 1 कटोरी, मैदा 1 कटोरी, पिसी हुई चीनी 1 कटोरी, मिल्क पाउडर 1 कटोरी, घी/तेल 1 कटोरी, वनीला एसेन्स 5–6 बून्द, बेकिंग पाउडर 1 छोटी चम्मच, सोडा आधा चम्मच।

विधिः मैदा, बाजरे का आटा, मिल्क पाउडर, बेकिंग पाउडर व सोडा को मिलाकर एक साथ अच्छी तरह छान लें। घी या तेल में पिसी हुई चीनी मिलाकर अच्छे से फेंट लें । इसके बाद आटे का मिश्रण बना लें। घोल को चमच्च से गिराने पर रिबन जैसी परत बनने पर घोल तैयार हो जाता है। केक के टिन में चिकनाई लगाकर घोल उसमें डालें व पूर्व में गर्म किए ओवन में 180 डिग्री सेंटीग्रेड पर 40 मिनट तक बेक करें। केक को ठंडा कर खाने हेतु परोस सकते हैं।

3. बाजरा मफिंस

सामग्रीः बाजरे का आटा– 1 कटोरी, मैदा– 1 कटोरी, पिसी हुई चीनी– 1 कटोरी, दूध पाउडर– 1 कटोरी, तेल/घी– 1 कटोरी, बेकिंग पाउडर– 1 चम्मच, वनीला एसेंस– 5–6 बून्द व सोडा– आधा चम्मच।

विधिः मैदा, बाजरे का आटा, मिल्क पाउडर, बेकिंग पाउडर व सोडा को एक साथ मिलाकर अच्छे से छान लेवे। घी या तेल व पिसी हुई चीनी को अच्छे से फेंट कर आटे का मिश्रण बना लें। घोल को चमच्च से गिराने पर रिबन जैसी परत बने तो घोल तैयार है। घोल बनने के बाद छोटे–छोटे आकार के टिन में घोल डालकर 150 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान पर ओवन को गर्म कर 30 मिनट तक रख दें। ठंडा होने पर सर्व करें। केक का आकार बड़ा होता है, जबकि मफिंस का आकार छोटा होता है।

4. बाजरे के लड्डू

सामग्रीः बाजरे का आटा– 1 कटोरी, चने का आटा– 1 कटोरी, गुड़– 1 कटोरी, घी– 1 कटोरी, गोंद– 25 ग्राम, सूखे मेवे– आवश्यकतानुसार।

विधिः बाजरे के आटे में चने के आटे को मिलाकर छान लें। मिश्रित आटे को थोड़ी मात्रा में लेकर कढ़ाई में कम आंच पर सुनहरा होने तक भूनें। भुने हुए आटे से सोंधी खुशबू आने लग जाएगी। आंच से उतारकर इसमें गुड मिलावे। कढ़ाई में थोड़ा घी डालकर उसमें गोंद को फुला लेंवे व आटे में मिला ले। बाकी बचे घी को गर्म करके आटे में अच्छे से मिला लें। छोटे–छोटे लड्डू बना कर सर्व करें।

5. बाजरे की मठरी

सामग्रीः बाजरे का आटा 1 कटोरी, मैदा 1 कटोरी, कसूरी मेथी 1 चम्मच, अजवाइन 4 चम्मच, नमक स्वादानुसार, तेल तलने के लिए।

विधिः बाजरे का आटा और मैदा को छानकर उसमें कसूरी मेथी व अजवाइन को मिला लें। आटे में थोड़ा तेल का मोयन डाल कर, पानी से सख्त गूंथे। आटे से छोटे– छोटे, गोले बनाकर पतली रोटी बेल कर, चाकू से मठरी काट लें। तेल गर्म कर कम आंच पर मठरियों को सुनहरा होने तक तले। ठंडा होने पर मठरियों को हवा रहित डिब्बों में बंद करके रख लें।

6. बाजरे का खाखरा

सामग्रीः बाजरे का आटा 1 कटोरी, गेहूं का आटा 1 कटोरी, नमक और लाल मिर्च स्वादानुसार, कसूरी मेथी 1 चम्मच।

विधिः बाजरा व गेहूं के आटे को मिलाकर छान लें। आटे में लाल मिर्च, नमक व कसूरी मेथी मिलाकर सख्त आटा गुथे। आटे का छोटा गोला बनाकर पतली रोटी बेल ले। तवे पर इस रोटी को कम आंच पर करारी सेक लें। ठंडा होने पर डिब्बों में पैक कर रख लें।

7. बाजरा नमकीन सेव

सामग्रीः बेसन 1 कटोरी, बाजरे का आटा 1/4 कटोरी, नमक और लाल मिर्च स्वादानुसार, जीरा छोटी चम्मच, तेल तलने के लिए।

विधिः बाजरे के आटे, बेसन में नमक, लाल मिर्च और जीरा डाल दें। फिर इसे पानी के साथ थोड़ा सख्त गूंथ लें। कड़ाही में तेल गर्म करें। गुथे हुए आटे की सेव बनाने वाली मशीन में डालकर गर्म तेल में निकालें और सुनहरा भूरा होने तक तलें। सेव को कागज पर निकालकर तेल सोखे व ठंडा होने पर हवा रहित डिब्बें में भरकर रखें।

मूंग : खरीफ की एक मुख्य दलहनी फसल

मुरलीधर अश्की, एच के दीक्षित, ज्ञान प्रकाश मिश्रा एवं दिलीप कुमार
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली –110012

दलहनी फसलों में मूंग कम समय में पकने वाली एक मुख्य दलहनी फसल है। मूंग की पौधों में वातावरणीय नाइट्रोजन को ग्रहण करने योग्य बनाने की अद्भूत क्षमता होती है जिसके कारण इसे कम उर्वरक की आवश्यकता होती है। एवं उत्पादन की लागत कम हो जाती है। मूंग की खेती लगभग पूरे भारत में की जाती है। महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु एवं उड़ीसा मूंग के प्रमुख उत्पादक राज्य हैं।

मूंग विभिन्न सस्य विधियों (एकल, अंतः एवं मिश्रित फसल) द्वारा उगायी जाती है। चूँकि मूंग विभिन्न फसल चक्रों एवं फसलों के साथ उगायी जाती है। इसलिए इसका एक विशेष स्थान है। मूंग की फसल रबी, खरीफ एवं बसंत ऋतुओं में उगायी जाती है। मूंग शाकाहारी भोजन का एक मुख्य एवं महत्वपूर्ण अवयव है।

खरीफ में मूंग की खेती मक्का, कपास, अरंडी, ज्वार, बाजरा एवं अरहर के साथ अत्यधिक प्रचलित है। तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, उड़ीसा एवं कर्नाटक में धान के बाद मूंग की खेती रबी की फसल में एकल फसल के रूप में की जाती है। पश्चिम बंगाल, बिहार, झारखंड, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब एवं हरियाणा में मूंग की खेती बसंत ऋतु या गर्मियों में एकल फसल के रूप में की जाती है।

जलवायु

मूंग की फसल किसी भी ऋतु में उगायी जा सकती है। दक्षिण भारत में मूंग की फसल रबी में उगायी जाती है। उत्तर भारत में मूंग की फसल ग्रीष्म एवं वर्षा ऋतु में उगायी जाती है। बसंत ऋतु में भी मूंग की खेती की जाती है। वैसे क्षेत्र जहां वर्षा 60 से 75 सेंमी तक होती है, मूंग के लिए उपयुक्त होते हैं। मूंग के अच्छे अंकुरण के लिए 25 से 40 डिग्री सें. तापमान उपयुक्त होता है। मूंग की फली बनते समय या पकते समय वर्षा होने से दाने सड़ जाते हैं।

मृदा

मूंग की फसल के लिए दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त होती है। यदि जल निकासी की उचित व्यवस्था हो तो मूंग की खेती मटियार एवं बलुई मृदा में भी की जा सकती है।

फसल चक्र

कपास, मक्का, अरहर, ज्वार एवं बाजरा के साथ मूंग की मिश्रित खेती की जाती है। उत्तरी भारत में मूंग के साथ अपनाये जाने वाले प्रचलित फसल चक्रः मूंग–गेहूं, मूंग–आलू, मक्का–गेहूं–ग्रीष्मकालीन मूंग, धान–गेहूं–ग्रीष्मकालीन मूंग आदि हैं। बहुधा ऐसा देखा गया है कि ग्रीष्मकालीन मूंग की उपज अपेक्षाकृत वर्षाकालीन मूंग से अधिक होती है। जिसका कारण ग्रीष्मकालीन फसल में सिंचाई के साधन का प्रयोग होने एवं अधिक वर्षा न होने के कारण जल की मात्रा संतुलित होती है। इसके साथ–साथ कीटों एवं रोगों का प्रकोप भी उग्र नहीं होता है।

बीज शोधन

मूंग के बीज शोधन के लिए थीरम/कैप्टान/कार्बनडाजियम का उपयोग 2–3 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से बुआई से 4–5 दिन पहले करना चाहिए।

बुआई का समय

मूंग की बुआई वसंत ऋतु में 10–25 मार्च, ग्रीष्म ऋतु में 20 मार्च से 5 अप्रैल एवं खरीफ ऋतु में 20 जुलाई से 5 अगस्त तक कर लेनी चाहिए।

बीज दर/बुआई की विधि

मूंग के बड़े दाने की प्रजाति 25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर एवं छोटे दाने की प्रजाति 20 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से करनी चाहिए। पंक्ति से पंक्ति के बीच 30 सें.मी. एवं पौधों के बीच का अन्तर 10 सें.मी. रखनी चाहिए।

उर्वरक

डी.ए.पी. 100 किलोग्राम, जिंक सल्फेट 25 कि.ग्रा. एवं खलिहानी खाद 5 टन का उपयोग प्रति हेक्टेयर करना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

खरपतवार नियंत्रण हेतु बुआई के तुरंत बाद पेंडिमिथीलीन 1 ली./हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए। इससे 20 से 25 दिनों तक खरपतवार मुक्त फसल रहती है।

सिंचाई

बुआई से पूर्व पलेवा करना चाहिए। वसंत एवं ग्रीष्म ऋतु में आवश्यकतानुसार दो से तीन सिंचाई करना चाहिए। पहली सिंचाई 20 से 25 दिनों के उपरांत करनी चाहिए। खरीफ में यदि आवश्यक हो तो सिंचाई करना चाहिए।

कीट नियंत्रण

फफोला भृंग

यह बहुभक्षी कीट है जो संपूर्ण भारत में मूंग की फसल को हानि पहुँचाता है। यह फूलों को चट कर जाते हैं एवं उत्पादन पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। कीटनाशकों द्वारा इस पर नियंत्रण नहीं किया जा सकता है। रात्रि में प्रकाश पाष का प्रयोग करके इस कीट के प्रजनन को कम किया जा सकता है। दस्ताने पहनकर इन कीटों को खेत में एकत्रित किया जा सकता है।

सूंडियां

हेलिकोवर्पा एवं तंबाकू की सूंडी मूंग की फसल को नुकसान पहुँचाने वाली सूंडियों में प्रमुख है। हेलिकोवर्पा की सूंडी फली में छेद करके इसका गूदा खा जाती है एवं तंबाकू की सूंडी पत्तों को तेजी से खा जाती है। इनके नियंत्रण के लिए 5 फेरोमोन ट्रैप प्रति हेक्टेयर लगाना चाहिए एवं बी टी एवं एच एन पीवी का छिड़काव आवश्यकतानुसार करना चाहिए। डेल्टामेथ्रिल कीटनाशक (1 मि.ली./ली.) का छिड़काव कीटों के प्रकोप को ध्यान में रखकर करना चाहिए। तंबाकू की सूंडियों (छोटी अवस्था) को एवं इनके अंडों को चुनकर नष्ट कर देना चाहिए।

दीमक

बुआई से पहले अंतिम जुताई के समय खेत में क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत या क्लोरोपाइरिफॉस पाउडर की 20–25 किलो ग्राम मात्रा प्रति हेक्टयर करने से फसल को दीमक के आक्रमण से बचाया जा सकता है। बुआई के समय बीज को क्लोरोपाइरिफॉस कीटनाशक की 2 मि.ली. मात्रा को प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित कर बोने से दीमक से फसल को बचाया जा सकता है।

फली छेदक

मोनोक्रोटोफॉस आधा लीटर या मैलाथियोन या क्युनालफॉस 1.5 प्रतिशत पॉउडर की 20–25 किलो हेक्टयर की दर से छिड़काव/भुरकाव करने से फली छेदक को नियंत्रित किया जा सकता है। आवश्यकता होने पर 15 दिन के अंदर दोबारा छिड़काव/भुरकाव करना चाहिए।

रस चूसक कीड़े

इस प्रकार के कीड़ों की रोकथाम हेतु एमिडाक्लोप्रिड 200 एस एल का 500 मी.ली. मात्रा का प्रति हेक्टयर की दर से छिड़काव करना चाहिए। आवश्कता होने पर दूसरा छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर कर सकते हैं।

रोग प्रबंधन

सर्कोस्पोरा पर्ण चीत्ती

पत्तियों पर प्रायः वृताकर एवं कभी–कभी कोणीय 0.5–4 मि.मी. (औसतन 3–4 मि.मी.) व्यास के विक्षत दिखाई देते हैं जिनका रंग बैगनी लाल एवं मध्य भाग भूरे रंग का होता है। कभी–कभी रोगग्रस्त भागों के आपस में मिल जाने से पत्ती के दो शिराओं के बीच अनियमित आकार का धब्बा बन जाता है। धब्बे पत्ती की उपरी सतह पर अधिक दिखाई देते हैं। अधिक धब्बे पड़ने के कारण फलियों का रंग काला पड़ जाता है एवं उग्र अवस्था में बीज भी संक्रमित हो जाता है। इसके कारण तनों के उपर भी बड़े आकार की चित्तियां बन जाती हैं। इसके नियंत्रण के लिए रोग के लक्ष्ण दिखते ही 0.05 प्रतिशत बावस्टिन या 0.2 प्रतिशत जिनेब का छिड़काव करना चाहिए। एक हेक्टेयर के लिए

1000 लीटर घोल पर्याप्त होता है। एवं इसे 7–10 दिनों के अन्तर पर दोहराना चाहिए। 3–4 बार इसका छिड़काव करने से इस पर काफी नियंत्रण हो जाता है। खेत में पड़े अवशेष को निकाल कर जलाने से आरंभिक निवेश द्रव्य की मात्रा कम हो जाती है।

पीला मोजेक

मूंग की रोग ग्राही जातियों में पीली कुर्बरता के रूप में यह अधिक व्यापक होता है। नई उगती हुई पंक्तियों के साथ ही कुर्बरता के लक्ष्ण दिखाई देते हैं। जिन पंक्तियों में पीली कुर्बरता या पीली उत्तकक्षय कुर्बरता के मिले–जुले लक्ष्ण दिखाई देते हैं। उनके आकार छोटे रह जाते हैं। इस प्रकार के पौधों में फलियां बहुत कम एवं छोटी होती है। ऐसी फलियों के बीज सिकुड़ जाते हैं एवं मोटे व छोटे हो जाते हैं। क्योंकि यह सफेद मक्खी से फैलता है इसलिए सफेद मक्खी की रोक–थाम से इसे नियंत्रित किया जा सकता है। जैसे ही खेत में इस रोग से ग्रसित पौधा दिखे थायोमेथाक्साम या इमिडाक्लोप्रिड 1.0 मिली. प्रति 3 लीटर पानी या मेटासिस्टाक्स 1.0 मिली. प्रति लीटर पानी का छिड़काव करना चाहिए। रोगग्रसित पौधों को छिड़काव के 24 घंटे के बाद उखाड़कर जला देना चाहिए। 1000 लीटर जल में बना घोल एक हेक्टेयर के लिए पर्याप्त होता है। इस रोग का प्रकोप ग्रीष्मकालीन एवं बसंतकालीन फसलों में कम एवं वर्षा ऋतु में ज्यादा होता है।

मोजेक

इस रोग का लक्षण अनियमित हल्के हरे क्षेत्र के रूप में पत्तियों के उपर दिखाई देता है। इससे पत्तियाँ विरूपित होकर आकार में छोटी हो जाती हैं। एवं किनारे की ओर मुड़ जाती हैं। इसकी रोक–थाम हेतुः

- रोगी पौधों से प्राप्त बीजों का उपयोग नहीं करना चाहिए।
- जैसे ही इस रोग से ग्रसित पोधा दिखाई दें, उसे उखाड़कर जला देना चाहिए।
- खरपतवार एवं कीटों पर नियंत्रण रखना चाहिए।

कटाई एवं गहाई

ग्रीष्म एवं बसंत ऋतु की फसलों में जब 50 प्रतिशत फलियां पक जाएं तो फलियों को तोड़ लेना चाहिए। एवं दूसरी बार जब फलियाँ पकें तो इसकी कटाई की जा सकती है। वर्षा ऋतु में जब अधिकतर फलियाँ पककर काली हो जाती हैं तो फसल काटी जा सकती है। फलियों को पकी अवस्था में खेत में अधिक समय तक छोड़ने से फलियां चटक जाती हैं जिससे उपज की हानि होती है।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित मूंग की उन्नत प्रजातियॉ

क्र.सं.	प्रजाति	अनुमोदित वर्ष	औसत उपज (किग्रा./हे.)	अनुमोदित क्षेत्र	उत्पादन परिस्थिति	परिपक्वता	मुख्य विशेषताएं
1.	पूसा 1641	2021	1300–1400	राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (ग्रीष्म ऋतु)	सिंचित	63 दिन	उत्तरी भारत के क्षेत्रों में एम.वाई.एम.वी. प्रतिरोधी, 50 प्रतिशत पुष्पन बुआई के 36 दिनों बाद एवं 100 दानों का वजन 4.2 ग्राम होता है।
2.	पूसा–1431	2018	1250–1350	राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (खरीफ)	सिंचित	66 दिन	एम.वाई.एम.वी., सर्कोस्पोरा लीफ स्पॉट, वैब ब्लाइट एवं एन्थ्रेक्नोज प्रतिरोधी, औसत प्रोटीन (25.4 प्रतिशत) एवं इसके 100 दानों का वजन 4.7 ग्ग्रम होता है।
3.	पूसा–1371	2017	900–1321	उत्तर पर्वतीय क्षेत्र (खरीफ)	वर्षा आध ारित	87 दिन	एम.वाई.एम.वी., मूल विगलन, वैब ब्लाइट एवं एन्थ्रेक्नोज प्रतिरोधी, औसत प्रोटीन (24.1 प्रतिशत) एवं 100 दानों का वजन 3.3 ग्राम होता है।
4.	पूसा–0672	2010	950–1000	उत्तर पर्वतीय क्षेत्र (खरीफ)	वर्षा आध ारित	52–103 दिन	एम.वाई.एम.वी. एवं सर्कोस्पोरा लीफ स्पॉट प्रतिरोधी एवं इसके 100 दानों का वजन 3.8–5.3 ग्ग्रम होता है।
5.	पूसा– 9531	2001	1100–1200	उत्तर–पश्चिमी मैदानी व मध्य क्षेत्र (वसंत व ग्रीष्म ऋतु)	सिंचित	65 दिन	एम.वाई.एम.वी. एवं समकालिक परिपक्वता होती है।
7.	पूसा विशाल	2001	1100–1200	उत्तर–पश्चिमी मैदानी क्षेत्र (वसंत ऋतु)	सिंचित	65 दिन	एम.वाई.एम.वी., समकालिक परिपक्वता एवं मोटे बीज होते हैं।

□□□

मूंग की उत्पादकता को प्रभावित करने वाले कारक तथा उनका टिकाऊ समाधान

अंकित*, कुलदीप सिंह राणा*, रामस्वरूप बाना* एवं शिव प्रसाद**
*सस्य विज्ञान संभाग, **जलवायु विज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली 110 012

मूंग जायद (ग्रीष्म ऋतु) तथा खरीफ (वर्षा ऋतु) में उगाई जाने वाली मुख्य दलहनी फसलों में एक है। भारतवर्ष में इसकी खेती आदिकाल से होती आ रही है जिसके कारण हमारे देश को मूंग के प्राथमिक उत्पत्ति स्थल के रूप में जाना जाता है। दलहनी फसलों के अंतर्गत उत्पादन एवं क्षेत्रफल की दृष्टि से चना एवं अरहर के पश्चात मूंग का तृतीय स्थान है। वर्तमान में भारत के पूर्वोत्तर समेत सभी राज्यों में इसकी खेती 4.5 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल पर की जाती है। वर्ष 2020–21 के दौरान हमारे देश के कुल दलहन उत्पादन में मूंग का योगदान लगभग 10 प्रतिशत था जो चना एवं अरहर की अपेक्षा क्रमशः 23 एवं 11 प्रतिशत कम है। भारत विश्व में मूंग के कुल उत्पादन की दृष्टि में अग्रणी देश है तथापि मूंग की उत्पादकता विश्व के औसत से कम है। यद्यपि भारत मूंग के 2.5 मिलियन टन उत्पादन एवं 550 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर उत्पादकता के साथ सर्वोच्च स्थान पर है तथापि प्रति इकाई क्षेत्रफल एवं लागत के अनुरूप उत्पादकता के क्षेत्र में अग्रणी होने के लिए इसकी खेती में त्रुटिपूर्ण पोषक तत्व प्रबंधन, जल प्रबंधन एवं कीट रोग व्याधि प्रबंधन के साथ खेती की पारंपरिक विधियाँ आदि कई चुनौतियाँ हैं। इसके अतिरिक्त, जलवायु परिवर्तन एवं मिट्टी की उर्वरता एवं उत्पादकता में निरंतर कमी आ रही है। फलस्वरूप मूंग के प्रति इकाई उत्पादन में स्थिरता बनी हुई है।

जायद ऋतु के अल्पकालीन समय में संरक्षित नमी पर की गई मूंग की खेती मुख्यतः अंतर्वर्ती फसल के रूप में की जाती है। धान आदि अनाज वाली फसल के उत्पादन के पश्चात मिट्टी की उर्वरता के संरक्षण एवं मनुष्य के आहार में प्रोटीन एवं कार्बोहाइड्रेट के सही संतुलन को बनाए रखने के लिए इस फसल की खेती उत्तर भारत में प्रचलित है। जायद मूंग में खरीफ की फसल की अपेक्षा कम कीट एवं रोग लगते हैं क्योंकि इस ऋतु में वातावरणीय नमी एवं तापमान दोनों ही कारक संतुलित रूप से फसल को प्राप्त होते हैं जबकि वर्षाकाल में नमी और तापमान में वृद्धि होने से कीटों के प्रजनन के लिए उपयुक्त वातावरणीय दशाएँ बनती हैं जिसके कारण इस ऋतु में फसल कीट एवं व्याधियों से अत्यधिक प्रभावित होती है। फलतः खरीफ मूंग की उत्पादकता में भारी कमी दृष्टिगोचर होती है।

वैश्विक जलवायु परिवर्तन एवं घटते प्राकृतिक संसाधनों के बदलते परिवेश में असाधारण जनसंख्या की खाद्य आपूर्ति एवं मानव भोजन के एक मुख्य घटक प्रोटीन की मांग को पूर्ण करना चुनौती के रूप में उभर रहा है। कीटनाशकों के अंधाधुंध प्रयोग के कारण न केवल खाद्य श्रृंखला दूषित हुई है अपितु कीट एवं व्याधियों में प्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न कर दी है जिसके कारण कीट नाशकों की संस्तुत मात्राओं के उपयोग से कीटों का प्रभावी प्रबंधन नहीं हो पा रहा है और कृषि उत्पादों में इन कीटनाशकों के अवशेष उनकी अनुमेय मात्राओं से अधिक पाये गए हैं। पर्यावरणीय संतुलन को बनाए रखते हुए दलहनी फसलों एवं प्राकृतिक प्रोटीन के उत्पादन के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता सुनिश्चित करने के लिए प्रभावी पारम्परिक विधियों के अन्वेषण एवं किसानों के अनुभवों को वैज्ञानिक कसौटियों पर परीक्षित कर टिकाऊ विधियों पर बल देना आवश्यक है जिससे पर्यावरणीय चुनौतियों एवं उत्तरोत्तर बढ़ती मांग के अनुरूप इसके सतत एवं इष्टतम उत्पादन स्तर के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके।

मूंग की उत्पादकता को प्रभावित करने वाले कारक

वातावरणीय कारक

क) सीमांत मृदा उर्वरताः भारत की 90 प्रतिशत मृदाएँ नाइट्रोजन न्यून हैं। हमारे देश में दलहनी फसलों

की खेती मुख्यतः कम उर्वरा शक्ति वाली भूमियों पर की जाती है जिनमें पौधों के आवश्यक पोषक तत्वों की भारी कमी होती है। पोषक तत्वों की कमी के कारण फसल अपनी वानस्पतिक एवं प्रजननात्मक वृद्धि समुचित रूप से नहीं कर पाती जिससे उत्पादकता में कमी आ जाती है।

ख) **भारी मृदाः** चिकनी भूमियाँ जिनमें क्ले की अधिकता होती है, मूंग के मूलतंत्र का विकास नहीं हो पाता है। मूंग में मूसला जड़ें पाईं जाती हैं जिनके समुचित वृद्धि एवं विकास के लिए गहरी मृदाओं की आवश्यकता होती है जबकि मूंग की खेती वाली अधिकतर मृदाओं की निचली परत में कैल्शियम कार्बोनेट ($CaCO_3$), लौह और सिलिकेट सामग्री के जमाव के कारण या बारंबार एक ही गहराई (10–15 सेमी) में की जाने वाली जुताई के कारण एक कठोर अधःस्तर (हार्ड पैन) पाया जाता है जिससे इसकी जड़ें मृदा के अधःस्तर से जल एवं पोषक तत्वों का अवशोषण नहीं कर पाती हैं जो फसल की उत्पादकता को विपरीत रूप से प्रभावित करता है।

ग) **अनावृष्टि / अतिवृष्टिः** सामान्यतः मूंग 400 से 500 मिमी वर्षा वाले क्षेत्रों में उत्पादित की जाती है। इन कम वर्षा वाले क्षेत्रों में, वर्षा जल अपर्याप्त होने के साथ–साथ उसका वितरण भी समान नहीं होता। मूंग में पुष्पन की पछेती अवस्था एवं फलियों में दाना बनने की अवस्था नमी के प्रति अति संवेदनशील या क्रांतिक होती है जबकि वर्षा आश्रित क्षेत्रों या संरक्षित नमी की दशा में बोई गई मूंग की फसल में इन अवस्थाओं पर नमी की कमी बहुधा देखने को मिलती है जो मूंग की उत्पादकता में 50 प्रतिशत तक की कमी ला सकती है। इसी प्रकार, अधिक वर्षा या भारी सिंचाई से मूंग में वानस्पतिक वृद्धि लंबे समय तक होती रहती है और पुष्पों को समुचित पोषण न मिल पाने के कारण फलियों में दाने पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो पाते हैं। इसके अतिरिक्त अधिक वर्षा या सिंचाई जल वातावरण को नम बनाते हैं जिससे कीट रोग एवं व्याधियों का प्रकोप भी बढ़ जाता है।

घ) **कम या खराब मृदा जलधारण क्षमताः** जायद की फसल के लिए यह कारक अत्यंत ही महत्वपूर्ण है क्योंकि इस कालावधि में वर्षा की संभावना नगण्य होती है तथा पौधे की वृद्धि पूर्णतः मिट्टी की संरक्षित नमी पर निर्भर करती है। मृदाएँ जिनमें बालू की मात्रा अधिक होती है सामान्यतः कम जलधारण क्षमता वाली होती हैं। ये मृदाएँ बड़े मृदा कणाकारों एवं कम सतही क्षेत्रफल के कारण फसल की जलमांग एवं अवधि के अनुरूप जल को संरक्षित नहीं कर पाती हैं जिसके परिणामस्वरूप फसल जलमांग की क्रांतिक अवस्थाओं में जल की कमी के कारण उत्पादकता में भारी कमी आ जाती है।

ङ) **तापमान में उतार–चढ़ावः** जलवायु परिवर्तन के परिवेश में वातावरणीय तापमान में अत्यधिक उतार–चढ़ाव आने प्रारम्भ हो गए हैं। अंकुरण, वानस्पतिक वृद्धि, पुष्पन एवं फलन से लेकर परिपक्वता तक मूंग एवं अन्य किसी भी फसल के जीवन चक्र में तापमान एक मुख्य प्रेरक बल है। पुष्पन एवं दाना भरते समय उच्च तापक्रम फलियों का समय पूर्व पक्वन का कारण बनाता है क्योंकि प्रकाश संश्लिष्ट (पत्तियों द्वारा बनाया गया भोज्य पदार्थ) का दानों में प्रवाह अवरुद्ध हो जाता है जिससे या तो दाने सिकुड़ जाते हैं या अविकसित रह जाते हैं।

च) **कीट व्याधियों का प्रकोपः** नाइट्रोजन एवं प्रोटीन में समृद्ध होने के कारण मूंग तथा अन्य दलहानी फसलों में कीट एवं रोगों का प्रकोप अपेक्षाकृत अधिक होता है। इसके अतिरिक्त मूंग की फसल के लिए उपयुक्त मौसम कीटों एवं व्याधियों के लिए भी उपयुक्त होता है जिससे इन फसलों में कीटों एवं व्याधियों द्वारा अधिक क्षति होती है और उत्पादकता में अंतर आता है।

सस्य प्रबंधकीय कारक

क) **पुराने बीज का उपयोगः** हमारे देश में फसलों, विशेषतः दलहनी फसलों की बीज प्रतिस्थापन दर अत्यधिक कम है जिसका मुख्य कारण भारतीय किसानों द्वारा फसल उगाने के लिए स्वउत्पादित बीजों का प्रयोग करना है। इन पुराने बीजों का ओज उन्नत क़िस्मों की अपेक्षा कम होता है जिसके कारण इन बीजों द्वारा ली गई फसल वातावरणीय विषमताओं को सहन करने के लिए अनुकूल नहीं होती और इसकी उत्पादकता घट जाती है। भारत सरकार के आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2019–20 में मूंग की बीज प्रतिस्थापन

दर 10 से 12 प्रतिशत थी। दलहनी फसलों की बीज नवीनीकरण अवधि 3 से 4 वर्ष की है अर्थात दलहनों के बीजों को 3 वर्षों तक एवं अधिकतम 4 वर्षों तक बुवाई के प्रयोजन के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है। इस अवधि के पश्चात इन बीजों की आनुवांशिक शुद्धता एवं कीट बीमारियों से प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है जिससे उत्पादकता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

ख) **वातावरण के प्रतिकूल किस्म का चुनावः** कुछ जागरूक कृषक बुवाई के लिए स्वउत्पादित बीज के स्थान पर उन्नत क़िस्मों का प्रयोग तो करते हैं किन्तु उनके क्षेत्र के लिए संस्तुत की गई किस्में या तो उपलब्ध नहीं होती या वे जानकारी के अभाव में किसी भी किस्म का चुनाव कर लेते हैं। वातावरण एवं क्षेत्र विशेष के लिए अनुकूल न होने के कारण उस किस्म के द्वारा इष्टतम उत्पादन प्राप्त नहीं हो पाता।

ग) **अनुचित बुवाई की विधिः** पारंपरिक विधियों से बोयी गई मूंग की फसल मुख्यतः जल के अभाव (जायद) या जल की अधिकता (खरीफ) के कारण उचित रूप से बढ़वार नहीं कर पाती जिससे प्रति इकाई कम उत्पादन प्राप्त होता है। बीज बोने की गहराई बीज के आकार एवं मृदा में उपलब्ध नमी के द्वारा निर्धारित होती है। जायद मूंग की उथली (5 सेमी से कम गहराई) बुवाई होने पर बीज समुचित मात्रा में जल का अवशोषण नहीं कर पाता जिससे जमाव प्रतिशत घट जाता है और प्रति इकाई क्षेत्रफल पौधों की कम संख्या होने पर कम उपज प्राप्त होती है। इसी प्रकार अधिक गहरी बुवाई (7 सेमी. से अधिक) करने पर भी बीज का जमाव प्रभावित होता है और बीज के अधिक गहराई में स्थित होने के कारण प्रांकुर भूमि की सतह से ऊपर नहीं आ पाता है।

घ) **त्रुटिपूर्णः** विभिन्न सामाजिक– आर्थिक कारणों से भारतीय किसान दलहनों की खेती में खाद और उर्वरकों कि संस्तुत मात्रा का प्रयोग नहीं कर पाते हैं। दलहनें नाइट्रोजन की कमी एवं अधिकता दोनों के ही प्रति समान रूप से संवेदनशील होती हैं। आरंभिक अवस्थाओं में समुचित पोषक तत्वों की उपलब्धता के फलस्वरूप मूंग एवं अन्य दलहनी फसलों का मूल तंत्र पूर्ण रूप से विकसित हो जाता है। मूंग की सुविकसित जड़ें, जड़ ग्रंथियों में निवास करने वाले सहजीवी जीवाणुओं (राइज़ोबियम) द्वारा वायुमंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण आरंभ कर देती हैं जिससे पौधे कि आगामी विकास की अवस्थाओं के लिए आवश्यक नाइट्रोजन की पूर्ति हो जाती है। इस अवस्था पर नाइट्रोजनयुक्त उर्वरकों के प्रयोग से सहजीवी जीवाणुओं पर विपरीत प्रभाव पड़ता है एवं पौधे वानस्पतिक अवस्था में ही बने रहते हैं। पुष्पन की अवस्था पर नाइट्रोजन की कमी प्रकाश संश्लेषण की क्रिया को प्रभावित करती है जिससे पुष्प निषेचन के पश्चात झड़ जाते हैं फलस्वरूप उत्पादकता में कमी आ जाती है।

ङ) **समय पर सिंचाई की अनुपलब्धताः** भारत में मूंग एवं अन्य दलहनी फसलों की खेती मुख्यतः वर्षाश्रित क्षेत्रों में की जाती है। वृद्धि की क्रांतिक अवस्थाओं पर जल की अनुपलब्धता पौधे की वानस्पतिक विकास में बाधा उत्पन्न करती है। खरीफ मूंग की अपेक्षा जायद मूंग की उत्पादकता इस परिस्थिति के कारण अधिक प्रभावित होती है।

च) **त्रुटिपूर्ण खरपतवार प्रबंधनः** श्रमिकों एवं शाकनाशियों के अधिक मूल्य या अनुपलब्धता के कारण कृषक क्रांतिक अवधि में खरपतवार नियंत्रण नहीं कर पाते हैं जिससे मूंग की उपज में लगभग 50 से 70 प्रतिशत तक की हानि हो जाती है। यह हानि न केवल खरपतवारों द्वारा पोषक तत्व, जल एवं स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा करने से होती है अपितु खेत में उगे ये खरपतवार कई प्रकार के कीट एवं बीमारियों को आश्रय देते हैं जो मुख्य फसल को विविध प्रकार से हानि पहुँचाते हैं जिससे फसल की उत्पादकता कम हो जाती है।

छ) **अव्यवस्थित कीट व्याधि नियंत्रणः** कीट या रोग की पहचान किए बिना ही किसी भी कीटनाशी या रोगनाशी के छिड़काव से फसल की वृद्धि एवं विकास पर विपरीत प्रभाव तो पड़ता ही है, साथ ही यह उत्पाद को विभिन्न घातक रसायनों से विषाक्त भी कर देता है जिससे मनुष्यों में गंभीर बीमारियों का संकट उत्पन्न हो जाता है। एक ही प्रकार के कीटनाशी या रोगनाशी के बारंबार प्रयोग से कीटों एवं रोगजनकों में उस रसायन के प्रति प्रतिरोधक क्षमता का विकास हो जाता है जिससे इन कीट व्याधियों का प्रभावी नियंत्रण नहीं हो

पाता है। अनियंत्रित कीट एवं रोग से फसल को गंभीर हानि होती है जो कुल उपज का 30 से 40 प्रतिशत तक एवं प्रकोप के प्रचंड होने पर 70 प्रतिशत तक हो सकती है फलतः इष्टतम उत्पादन प्राप्त नहीं होता है।

ज) **असमय फसल की कटाईः** किस्मों के अनुसार मूंग 70 से 90 दिन में कटाई योग्य हो जाती है। मूंग में वानस्पतिक वृद्धि एवं पुष्पन अनिश्चित बढ़वार वाली होती है। मिट्टी में पर्याप्त नमी एवं अन्य वातावरणीय दशाओं के अनुकूल होने पर मूंग में पुष्पन सतत रूप से जारी रहता है। परिणामस्वरूप, मूंग के पौधे पर एक ही समय में पुष्प, हरी फलियाँ और सुनहरी–भूरी परिपक्व फलियाँ दिखाई दे सकते हैं। मूंग एवं अन्य दलहनी फसलों में अनिश्चित बढ़वार कटाई के निर्णय को लेकर भ्रम उत्पन्न करती है। सामान्यतः किसान मूंग की कटाई सभी फलियों के पकने पर करते हैं। मूंग की फली सूखने पर पतली और भंगुर हो जाती है, इसलिए मूंग एवं अन्य दलहनी फसलों में फली स्फुटन या फलियों का फटना एक बड़ी समस्या है जिसके कारण उपज में लगभग 15 से 20 तक की हानि हो सकती है। फली स्फुटन की समस्या देर से कटाई की परिस्थितियों में अत्यधिक गंभीर हो सकती है।

दैहिकीय कारक

शोध से ज्ञात हुआ है कि मूंग एवं अन्य दलहनों में खिलने वाले कुल पुष्पों में से 45 से 50 प्रतिशत पुष्प कई कारणों से झड़ जाते हैं जो निम्नलिखित हैंः

- सीमित प्रकाश संश्लेषण
- हारमोन असंतुलन
- वृद्धि अवरोधक
- अपर्याप्त प्रकाश उपलब्धता
- नमी असंतुलन
- पौधे के छत्र में अपर्याप्त वातायन
- आनुवांशिक कारण

भारतीय कृषि के संदर्भ में मूंग की उत्पादकता सुधारने के टिकाऊ समाधान।

क) **उन्नत किस्मों का चुनावः** किसी भी फसल का उत्पादन स्तर कई कारकों पर निर्भर होता जिसमें उपयुक्त किस्म का चुनाव मुख्य है। फसल की किस्म के चुनाव करते समय तापमान, मिट्टी का प्रकार एवं उसकी जलधारण क्षमता, नमी की उपलब्धता, वर्षा की मात्रा एवं वर्षाकाल आदि ध्यान में रखने चाहिए। निम्नलिखित तालिका में भारत के विभिन्न राज्यों के लिए मूंग की उन्नत किस्में संस्तुत की गईं हैंः

तालिका 3ः मूंग की अधिक उपज देने वाली किस्में

किस्म	राज्यों के लिए संस्तुत
पूसा 9531	पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, राजस्थान, जम्मू – कश्मीर, हिमाचल प्रदेश के मैदानी क्षेत्र
पूसा विशाल	उत्तरी पश्चिमी मैदानी क्षेत्र
पूसा रत्ना	राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली
पूसा 0672	उत्तरी पहाड़ी क्षेत्र
पूसा 105	उत्तरी पश्चिमी एवं मध्य मैदानी क्षेत्र
पूसा 1371	उत्तरी पहाड़ी क्षेत्र

जायद के लिए उपयुक्त किस्में – पूसा विशाल, पूसा बैशाखी, पंत मूंग 1, पंत मूंग 2, टॉम्बे जवाहर मूंग–3, पीडीएम 11, पीडीएम 54, शिखा, विराट

खरीफ के लिए उपयुक्त किस्में – पूसा विशाल, पंत मूंग 2, पंत मूंग 6, पंत मूंग 8, पीडीएम 54, केएम 2328

ख) **खेत का आदर्श परिष्करणः** ग्रीष्मकालीन या जायद मूंग की खेती के लिए मिट्टी में नमी संरक्षण हेतु रबी फसलों की कटाई के तुरंत पश्चात खेती की हल्की जुताई करनी चाहिए। इसका उद्देश्य पूर्ववर्ती फसल के अवशेषों में छिपे कीट के अंडों एवं रोगजनकों आदि का सूर्य के ताप के द्वारा विनष्टिकरण एवं मृदा में वातायन सुनिश्चित करना है। इस जुताई के 4–5 दिन पश्चात एक हल्की सिंचाई (पलेवा) दे कर खेत की 2–3 जुताइयाँ देशी हल या मिट्टी पलट हल या कल्टीवेटर से करनी चाहिए। अंतिम जुताई के समय पाटा लगाकर खेत का समतलीकरण अवश्य करना चाहिए। इस क्रिया से जुताई से प्राप्त भुरभुरी मिट्टी के ऊपर एक सतह का निर्माण हो जाता है जिसका उद्देश्य वाष्पीकरण द्वारा होने वाली जल हानि को रोकना एवं मिट्टी में नमी का संरक्षण करना है। इसके फलस्वरूप

बीजों का अधिकतम जमाव सुनिश्चित हो जाता है।

इसके अतिरिक्त भारी भूमियों में मिट्टी की सतह पर पपड़ी बनने की रोकथाम के लिए गोबर की खाद या कम्पोस्ट के साथ 2 टन प्रति हेक्टेयर की दर से चूने के प्रयोग से उपज में 15 से 20 प्रतिशत तक अतिरिक्त उपज प्राप्त की जा सकती है।

ग) **उचित बीज दरः** ग्रीष्मकालीन या जायद मूंग की फसल जो पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार एवं छत्तीसगढ़ आदि राज्यों में धान की परती भूमि पर ली जाती है, के लिए 25 से 30 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टेयर सर्वथा पर्याप्त है। जबकि खरीफ मूंग में अधिक वानस्पतिक वृद्धि होने कारण 20 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टेयर की कम बीज दर की संस्तुति की गई है।

घ) **बीजशोधनः** बीजों का बुवाई से पूर्व फफूंदनाशी, कीटनाशी, राइज़ोबियम एवं फॉस्फोरस विलायक जीवाणुओं (पीएसबी) के टीके से क्रमानुसार शोधन अवश्य करना चाहिए। बीज शोधन मृदा में बोये गए बीजों एवं नवांकुरित पौधे को मृदाजनित कीट एवं बीमारियों से सुरक्षा प्रदान करता है। फफूंदजनित रोगों की रोकथाम के लिए कार्बेन्डाजिम और केप्टान (1 ग्रा + 2 ग्रा) के मिश्रण से एवं मृदाजनित कीटों की रोकथाम के लिए इमिडाकलोप्रिड 70 डब्लू.एस. की 7 ग्रा/किलोग्राम की दर से उपचारित करना चाहिए। अंत में राइजोबियम एवं पीएसबी कल्चर से 5–7 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से बीज का शोधन कर बीजों को छाया में रखें और सूखने पर बुवाई करें। दलहनी फसलों में राइजोबियम एवं पीएसबी कल्चर द्वारा जैविक विधि से बीज शोधन उपज में वृद्धि करने की एक पर्यावरण हितैशी विधि है जिससे 15 से 20 प्रतिशत तक अधिक उपज के साथ नाइट्रोजन एवं फास्फेटिक उर्वरकों की 25 प्रतिशत मात्रा की बचत होती है।

ङ) **समयानुसार बुवाईः** ग्रीष्मकालीन या जायद मूंग की बुवाई 15 मार्च से 15 अप्रैल तक अवश्य कर लेनी चाहिए क्योंकि इस समयावधि में बीज अंकुरण के लिए आदर्श दशाएँ जैसे मिट्टी में पर्याप्त नमी एवं ऐच्छिक तापक्रम अनुकूल होते हैं। विलंब से बोई गई जायद मूंग में पुष्पन के समय (मध्य मई) अधिक तापक्रम (35 से 40 ℃) से फलियाँ कम बनती हैं क्योंकि अधिकतर पुष्प परागोद्भव एवं निषेचन के पश्चात झड़ जाते हैं। उत्तर भारत में खरीफ मूंग की बुवाई जून के अंतिम सप्ताह से लेकर जुलाई के प्रथम सप्ताह, जो मानसून का उन्नयन काल है, तक कर लेनी चाहिए।

च) **पर्याप्त फसल अंतरणः** इष्टतम उपज प्राप्त करने के लिए मूंग की बुवाई पंक्तियों में करनी चाहिए जिससे निराई–गुड़ाई, खरपतवारों के निष्कासन और प्रक्षेत्र निरीक्षण की सुविधा सुनिश्चित हो जाती है। प्रचुर वानस्पतिक वृद्धि होने के कारण खरीफ मूंग की बुवाई पंक्तियों में 30 सेमी से लेकर 45 सेमी मृदा उर्वरता के स्तर के आधार पर की जाती है जबकि जायद मूंग की बुवाई पंक्ति से पंक्ति में 20–22.5 सेमी की दूरी पर और पौधे से पौधे के मध्य 10–15 सेमी की दूरी पर की जाती है जिससे लगभग 33 पौधे प्रति वर्ग मीटर के क्षेत्र में समायोजित होते हैं। इस प्रकार एक हेक्टेयर प्रक्षेत्र में लगभग 325,000 पौधों की संख्या की संस्तुति की गई है।

छ) **उचित गहराई में बीज की बुवाईः** मिट्टी में नमी की मात्रा पूर्ववर्ती फसल एवं मौसम पर निर्भर करती है एवं बीज बोने की गहराई का निर्धारण मिट्टी में उपलब्ध नमी की मात्रा पर किया जाता है। इस प्रकार ऋतु के अनुसार बीज बोने की गहराई खेत में पौधों की शत–प्रतिशत आबादी को प्रभावित करता है। इसलिए जायद की फसल को अधिकतम 5 सेमी एवं खरीफ की फसल को अधिकतम 7 सेमी की गहराई में बोया जाना चाहिए।

ज) **क्षेत्र विशेष के अनुसार फसल स्थापना विधि का चुनावः** सीमित नमी की दशा में मूंग की बुवाई उठी हुई क्यारी और कूँड़ विधि से करनी चाहिए। वर्षा आश्रित क्षेत्रों में वर्षा जल के असमान वितरण के कारण मृदा में जल की अधिकता (जल निकास) एवं कमी (मृदा नमी संरक्षण) के समाधान के लिए यह विधि सर्वोत्तम है। इस विधि में खेत की सतह से 15 सेमी ऊंची उठी हुई क्यारियाँ जो 35 से 40 सेमी चौड़ी होती हैं, 30 सेमी चौड़ाई वाले कूँड़ के एकांतरण पर बनाई जाती हैं। खरीफ ऋतु में भारी वर्षा की दशा में आवश्यकता से अधिक जल क्यारियों से बहकर कूँड़ में आ कर संरक्षित हो जाता है। जबकि वर्षा के अभाव में यह संरक्षित जल

पौधे की जड़ों को क्षैतिज गमन के द्वारा प्राप्त होता है जिससे नमी की उपयोग दक्षता बढ़ने के साथ–साथ उपज में 5 से 10 प्रतिशत तक की वृद्धि होती है।

इसी प्रकार धान की कटाई के पश्चात मूंग की शून्य परिष्करण (ज़ीरो टिल) विधि से बोई गई फसल की उपज पारंपरिक विधि से बोई गई फसल की अपेक्षा अधिक होती है क्योंकि इस विधि में जुताई न होने के कारण मृदा नमी का ह्रास नहीं होता है और फसल इस संरक्षित नमी का दक्षतापूर्वक उपयोग कर पाती है। जायद ऋतु के लिए शून्य परिष्करण एवं पूर्ववर्ती फसल के अवशेषों की पलवार के साथ मूंग की फसल अवस्थापना करने से कम संसाधनों में अधिक उपज प्राप्त होती है।

झ) नियमित खरपतवार प्रबंधनः जायद मूंग एवं खरीफ मूंग में खरपतवार नियंत्रण का क्रांतिक काल क्रमशः 15–30 दिन एवं 20–40 दिन है। सामान्यतः मूंग की फसल में दो निराइयों की आवश्यकता पड़ती है जिसमें पहली 20 से 25 दिन की अवस्था पर एवं दूसरी 40 दिन की अवस्था पर की जाती है। श्रम लागत अधिक होने के कारण रासायनिक विधियों पर निर्भरता अधिक है हालांकि ये उत्पाद के साथ–साथ पर्यावरण को भी दूषित करता है। इसलिए खरपतवारों के जमाव से पूर्व पेंडिमेथलीन 30 ईसी के 0.75 से 1 किग्रा प्रति हेक्टेयर सक्रिय तत्व का 400 से 600 लीटर पानी के घोल का फ्लैट फैन नोजेल के द्वारा छिड़काव की संस्तुति दी गई है। हालांकि खरपतवार उन्मूलन की रासायनिक विधियों के साथ पारंपरिक विधियाँ जैसे निराई–गुड़ाई एवं पलवारीकरण आदि के अनुपालन से खरपतवारों की संख्या को कम लागत में आर्थिक क्षति सीमा के भीतर रखा जा सकता है। अलग–अलग कार्य प्रणाली वाले शाकनाशीयों के एकल या उनके मिश्रण के प्रयोग से खरपतवारों में शाकनाशियों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता विकसित नहीं हो पाती जिससे उनका उचित प्रकार से नियंत्रण संभव हो जाता है।

ञ) कुशल जल प्रबंधनः सामान्यतः खरीफ मूंग में फलियों के प्रारम्भिक विकास की अवस्था में एक सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है जबकि जायद मूंग में 3 से 4 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। जायद मूंग में पहली सिंचाई बुवाई के 20 से 25 दिन पश्चात देनी चाहिए। मृदा में नमी के अनुसार 10 से 15 दिन के बाद एक हल्की सिंचाई देनी चाहिए। स्वस्थ फली एवं बीज के उत्पादन के लिए पुष्पन से पहले एवं फलियों में दाना भरते समय सिंचाई अत्यंत आवश्यक है। पुष्पवस्था के दौरान सिंचाई नहीं देनी चाहिए क्योंकि अनिश्चित बढ़वार होने के कारण मूंग के पौधे वानस्पतिक वृद्धि करते रहते हैं जिससे फलियों के विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

ट) एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधनः जड़ ग्रन्थियों में उपस्थित जीवाणुओं के द्वारा वायुमंडलीय नाइट्रोजन के स्थिरीकरण के कारण दलहनें उर्वरकों द्वारा दी गई नाइट्रोजन के प्रति कम अनुक्रियाशील होती हैं अर्थात अधिक मात्रा में दी गई नाइट्रोजन उपज में वृद्धि के स्थान पर वानस्पतिक वृद्धि को उत्प्रेरित करती है जिससे फसल में कीट रोग व्याधियों का प्रकोप बढ़ जाता है। इसलिए मूंग एवं अन्य दलहनों में नाइट्रोजन का प्रयोग सावधानीपूर्वक मृदा परीक्षण के आधार पर उसमें उपस्थित पोषक तत्वों की मात्रा के अनुरूप करना चाहिए।

यदि उपलब्ध हो तो गोबर की खाद 8 से 10 टन प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के 15 से 20 दिन पूर्व खेत में मिलानी चाहिए जिससे खाद में उपस्थित पोषक तत्व उपलब्ध अवस्था में आ जाएँ। नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस क्रमशः 20 एवं 40 से 60 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से डाई अमोनियम फास्फेट के रूप में बीज की बुवाई के समय बीज के 2–4 सेमी नीचे गहराई में ड्रिलिंग के द्वारा अवस्थापित करना चाहिए। आवश्यकतानुसार पोटाश की 20 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर मात्रा बुवाई के समय अवस्थापित करनी चाहिए। जैविक बीज शोधन एवं प्राकृतिक खादों के उपयोग से सूक्ष्म मात्रिक तत्वों की आपूर्ति सुनिश्चित होने के साथ 20 से 25 प्रतिशत नाइट्रोजन एवं फॉस्फेटिक उर्वरकों की बचत भी होती है। इसके अतिरिक्त सल्फर दलहनी फसलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता की वृद्धि के लिए आवश्यक द्वितीयक पोषक तत्व है जिसे जिप्सम या सिंगल सुपर फॉस्फेट के रूप में 10 किलोग्राम (वर्षाश्रित क्षेत्र) एवं 20 किलोग्राम

(सिंचित क्षेत्र) प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में देना चाहिए।

ठ) एकीकृत कीट रोग व्याधि प्रबंधनः सफेद मक्खी, तना मक्खी एवं बिहार रोमिल सूँडी मूंग के मुख्य कीट हैं। सफेद मक्खी मूंग में एक वायरस जनित रोग, पीला मोजेक रोग की वाहक है जिससे फसल को अत्यधिक हानि पहुँचती है। मूंग में पुष्प कालिका विकास के बाद की अवस्थाएँ कीटों के लिए अतिसंवेदनशील होती हैं।

मूंग के लिए प्रमुख आईपीएम रणनीतियाँः पारिस्थितिकी तंत्र को नुकसान पहुंचाए बिना कीट प्रवण क्षेत्रों में मूंग की अधिक उपज लेने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैंः

- पीत शिरा मोजैक रोग की रोकथाम के लिए प्रतिरोधी किस्में जैसे पूसा विशाल, पूसा 9531, पंत मूंग 3, सम्राट, पीडीएम 11, एमयूएम 2 आदि का चुनाव करें।
- मूंग में वानस्पतिक अवस्था तक 33% तक निष्पत्रण (पत्तियों का विरलीकरण) उपज हानि के बिना किया जा सकता है जो पौधे के छत्र (वितान) में वातायन सुनिश्चित करता है फलतः कीटों एवं रोगजनकों को आश्रय न मिलने के कारण अधिकांश पुष्प फलियों में विकसित होकर कुल उपज में वृद्धि करते हैं।
- पीला (सफ़ेद मक्खियों के लिए) एवं नीला स्टिकी ट्रैप और फेरोमोन ट्रैप की स्थापना
- एज़ाडिरेक्टिन (नीम आधारित कीटनाशक) का 1 मिली/ली. की दर से दो छिड़काव
- स्पिनोसैड (मृदा जीवाणु आधारित कीटनाशक) का 1.2 मिली/ली. की दर से तीसरा छिड़काव थ्रिप्स और फली बेधक को नियंत्रित करने के लिए सर्वोत्तम विकल्प हैं।
- चूर्णिल आसिता रोग के लिए नीम के बीजों की गिरि से प्राप्त अर्क जो बाजार में एनएसकेई या नीम सीड कर्नल एक्सट्रैक्ट के नाम से मिलता है, के दो छिड़काव 50 ग्राम प्रति लीटर पानी के साथ रोग के लक्षण दिखाई देते ही 10 दिन के अंतराल पर कारना चाहिए।
- आंध्र प्रदेश के कुछ जागरूक किसान सतही एवं अधो मृदा के घोल (मृदा कीटनाशी) के छिड़काव से कीटों विशेषतः टिड्डी दल के आक्रमण से फसल को सुरक्षित करने में सफल हुए हैं। इस घोल को बनाने के लिए सतही (5 सेमी) एवं अधो मृदा की बराबर मात्रा (1:1; प्रत्येक 15 किग्रा) को धूप में अलग–अलग सुखाने के बाद 200 लीटर पानी में अच्छी प्रकार से घोलते हैं। आधे घंटे के बाद मिट्टी सतह में बैठ जाती है एवं ऊपर के घोल को निथार कर सूती कपड़े से छानकर स्प्रेयर के द्वारा फसल पर 7 से 10 दिन के अंतराल पर छिड़काव किया जाता है। इस प्रकार पौधों पर मिट्टी के कणों के एक पारदर्शी परत बन जाती है जिसके कारण पौधे के हरे भाग कीटों के लिए अभक्ष्य हो जाते हैं क्योंकि कीटों में मृदा के कणों को पचाने के लिए यकृत नहीं होता है।

ड) फसल की कटाईः अधिकतम उपज और अच्छी गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए फसल कटाई का आदर्श चरण तब होता है जब अधिकांश फलियाँ दैहिकीय रूप से परिपक्व होती हैं और 85 से 90 प्रतिशत फलियाँ सुनहरी से भूरी–काली पड़ना आरंभ हो जाती हैं। यह मूंग की कटाई का सबसे उपयुक्त समय माना गया है। हालांकि फसल के पूर्ण रूप से परिपक्व होने पर फली स्फुटन की समस्या उत्पन्न हो जाती है जिससे होने वाले नुकसान से बचने के लिए फली की तुड़ाई फसल के पूर्णतः परिपक्व होने से पहले एक या दो बार में करने की संस्तुति की जाती है। मूंग की फली स्फुटन प्रतिरोधी किस्मों जैसे पीडीएम 11 आदि का चुनाव करना चाहिए।

उपज

आदर्श दशाओं में उचित प्रक्षेत्र प्रबंधन के साथ जायद मूंग से लगभग 12–15 क्विंटल प्रति हेक्टेयर जबकि खरीफ मूंग से 8–10 क्विंटल प्रति हेक्टेयर दाने की उपज प्राप्त हो सकती है। मूंग के भूसे की उपज 20 से 25 क्विंटल तक प्राप्त हो जाती है जो पशुओं के लिए एक शुष्क पदार्थ का प्रोटीन सम्पन्न स्त्रोत है।

प्रस्तुत मूंग की उन्नत खेती तकनीकों की नवीनतम जानकारी विभिन्न शोध पत्रों, वैज्ञानिक आलेखों, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के वार्षिक प्रतिवेदनों एवं कृषि पत्रिकाओं से संकलित की गई है।

उत्तर भारत में सोयाबीन की खेती की संभावनाएं एवं उन्नत उत्पादन तकनीक

मनीषा सैनी, अक्षय तालुकदार, आशीष कुमार एवं एस. के. लाल
आनुवंशिकी संभाग, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली –110012

बीज फलियों में सबसे महत्वपूर्ण सोयाबीन जो पूरे विश्व में अनेक नामों जैसे की अद्‌भुत फसल, गोल्डन बीन, सोने का दाना, सुनहरी बीन से लोकप्रिय है। सोयाबीन सबसे अधिक एवं उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन (40%) एवं वसा (18 –20%) का स्त्रोत है और विश्व में खाद्य तेल का 25% एवं पशुओं के चारे के लिए लगभग दो–तिहाई प्रोटीन का योगदान देता है तथा इसमें पाए जाने वाले प्रोटीन में सभी प्रकार के आवश्यक एमिनो अम्ल, लवण एवं विटामिन पाये जाते हैं, जिसके कारण सोयाबीन का भारतीय भोजन में एक मुख्य अन्न खाद्य के रूप में समावेश करने की क्षमता है। विशेषकर देश के ग्रामीण भागों में फैली हुई कुपोषण की समस्या से निजात दिलाने में सोयाबीन अग्रणी भूमिका निभा सकता है।

भारत में सोयाबीन की व्यावसायिक खेती की शुरुआत करीब पांच दशक पुरानी है। नगदी फसल होने व देश की काली मिट्टी वाले क्षेत्रों के फसल चक्र में उपयुक्त होने के कारण सोयाबीन का काफी विस्तार हुआ है, वर्ष 1960 के दशक में केवल 10,000 हेक्टेयर से शुरुआत के साथ आज लगभग 114 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में उगाई जा रही है और वर्ष 2001 से ही सोयाबीन भारत के तिलहन उत्पादन में प्रथम स्थान अर्जित किये हुए है। सोयाबीन की खेती भारत में मुख्य रूप से मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, कर्नाटक, आँध्रप्रदेश के कृषकों द्वारा की जाती है और उत्तर भारत के राज्य जैसे पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा हिमांचल के क्षेत्र जहाँ वार्षिक 700 मि.मी. या अधिक बारिश होती है, सोयाबीन की खेती के लिए अनुकूल पाए गए है तथा सोयाबीन की उपज में क्रमशः 45 एवं 40 प्रतिशत हिस्सेदारी मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र की है जो वहाँ के किसानों के सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान में मुख्य भूमिका निभाता है।

सोयाबीन दलहन कुल का पौधा होने के कारण इसमें नाइट्रोजन स्थिरीकरण का गुण पाया जाता है जिसके फलस्वरूप 60–100 कि.ग्रा./हेक्टेयर वातावरण की नाइट्रोजन को मृदा में स्थिर करती है। धान एवं गेंहू की लगातार खेती होने से जिन राज्यों में मृदा के स्वास्थ्य में लगातार गिरावट आ रही है वहां यह मृदा में नाइट्रोजन का स्थिरीकरण कर के नाइट्रोजन की भरपाई करने के साथ साथ मृदा के स्वाथ्य में काफी सुधार करने में सहायक है। सोयाबीन के लिए सिंचाई की अनिवार्यता धान के मुकाबले काफी काम पायी जाती है और बारिश न होने यानि कि सूखे की अवस्था में सोयाबीन में कम से कम तीन से चार बार सिंचाई कर के संतोषजनक पैदावार हासिल कर सकते हैं। फलस्वरूप इन सभी पहलुओं से पता चलता है की उत्तर भारत के राज्यों में भी सोयाबीन की खेती की अपार सम्भावनायें हैं।

चित्रः 1: सोयाबीन की फलिया, 2: सोयाबीन के दाने/बीज़ सूत्र; इंटरनेट

सोयाबीन उत्पादन की सस्य क्रियाएं

मृदा

सामान्यतः सोयाबीन की खेती अति अम्लीय, क्षारीय व रेतीली मृदाओं को छोड़ कर सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है परन्तु काली दोमट मिट्टी इसके लिए उत्तम मानी गई है।

खेत की तैयारी

बीज की बुआई से पहले 2 से 3 वर्ष में एक बार खेत की गहरी जुताई करना लाभकारी माना गया है। गहरी जुताई करने क बाद विपरीत दिशा में बक्खर चलाने के बाद पाटा लगाएं।

भारत के उत्तरी मैदानी क्षेत्रों के लिए विकसित किस्में

भारत के उत्तर मैदानी क्षेत्रों जिसमें पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, उत्तर प्रदेश के उत्तरी पूर्वी मैदान, उत्तराखंड के मैदानी भाग आते हैं, इनके लिए विकसित सोयाबीन की किस्में हैं, पूसा–9712, पूसा– 9814, पूसा–12, पी. एस. 1347, पी. एस. 1368 एवं पूसा–06।

बुआई का समय

जैसा की सोयाबीन मॉनसून आधारित खरीफ मौसम की फसल है इसलिए इसकी बुआई काफी हद तक वर्षा के पूर्वानुमान पर ही निर्भर करती है तथा जब तक मिट्टी में उचित नमी न हो तब तक बुआई नहीं करनी चाहिए। सामान्यतः कम से कम 100 मि.मी. का वर्षा का होना पर्याप्त माना जाता है।

बीज का अंकुरण परीक्षण

बुआई के पहले सोयाबीन के बीजों का अंकुरण परीक्षण जो की न्यूनतम 70 प्रतिशत है सुनिश्चित कर लेना चाहिए।

पौधों की संख्या एवं दूरी

सामान्यतः अधिकाधिक उत्पादन हेतु 4–6 लाख पौधे प्रति हेक्टेयर होना चाहिए। अतः बुआई के समय कतार से कतार एवं पौधे से पौधे के बीच की दूरी क्रमशः 45 से.मी. एवं 5 से.मी. निर्धारित की गई है।

बीज दर

बीज दर बीज के आकार एवं अंकुरण के आधार पर तय की जाती है। 70 प्रतिशत अंकुरण के आधार पर बीज दर :

छोटा दाना : 60 – 65 कि.ग्रा. / हे.

मध्यम दाना : 70 – 75 कि.ग्रा. / हे.

मोटा दाना : 80 – 85 कि.ग्रा. / हे.

बीजोपचार

बीजोपचार करने हेतु सोयाबीन के बीज को बुआई से पहले थाइरम एवं कार्बेन्डाजिम (2:1 के अनुपात में) 3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज कि दर से उपचारित करने से बीज जनित कवक रोगों से बचा जा सकता है। तत्पश्चात नाइट्रोज़न स्थिरीकरण करने वाले लाभदायक जीवाणुओं कि उपलब्धता बढ़ाने के लिए जैविक खाद (ब्रेडीराइजोबियम कल्चर एवं पीएसबी कल्चर 5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज कि दर से) उपचारित करने से उत्पादकता में काफी वृद्धि पायी गई है। उपचारित करने के तुरंत बाद बीजों को छाया में सुखाकर तुरंत बुआई करना चाहिए।

बुआई का तरीका एवं गहराई

बेहतर परिणाम के लिए बीजों कि बुआई कि गहराई 3 से. मी. उपयुक्त मानी जाती है एवं बुआई के समय खाद का प्रयोग नहीं करना चाहिए। बेहतर परिणाम के लिए सोयाबीन कि बुआई ब्राड बेड फरो (बीबीएफ) या रिज फरो पद्धति से बुआई करना लाभकारी माना गया है। मानसून कि देरी एवं बुआई में देर हो जाने पर जल्दी पकने वाली किस्मों के प्रयोग के साथ ही क़तार से क़तार के बीच कि दुरी घटा कर 25 से.मी. साथ ही साथ बीज दर 25 प्रतिशत बढाकर बुआई करने कि सलाह दी जाती है।

संतुलित पोषण प्रबंधन

उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण की संस्तुतियों के आधार पर किया जाना चाहिए। जिससे उर्वरकों की सही मात्रा का निर्धारण करने में मदद मिलती है। यदि मृदा परीक्षण नहीं कराया गया हैं तो उन्नतिशील प्रजातियों के लिए प्रति हेक्टेयर N:P:K:Zn की मात्रा 25:60:40:20 निर्धारित की गई है जो की उर्वरक के रूप में 54 kg यूरिया, 375 kg एस. एस. पी. एवं 66 kg एम. ओ. पी. प्रति हेक्टेयर होती है। साथ ही साथ ऐसा देखा गया है की गोबर की खाद डालने से जड़ों में ग्रंथियां अच्छी बनती है।

सस्य क्रियाएं एवं खरपतवार प्रबंधन

सोयाबीन कि अच्छी पैदावार के लिए खरपतवार प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है। ऐसा पाया गया है कि कम से कम

3 वर्ष में एक बार खेत कि गहरी जुताई (20–30 से. मी.) तत्पश्चात मिटटी को खुली धूप में छोड़ने से तेज धुप के कारण खरपतवार, किट, ब्याधि व पोषण के प्रबंधन में सहायता मिलती है। साथ ही साथ वर्षा का जल जो की भूमि के अंदर टपकन (परकोलेशन) विधि से समाहित होती है, वर्षा के जल को भूमि के अंदर संचय किया जा सकता है। वैसे सोयाबीन कि बुआई के बाद 45 दिनों तक खरपतवार से मुक्त रखना होता है जिससे कि फसल को अधिक मात्रा में पोषक तत्व उपलब्ध हो सके। खरपतवार प्रबंधन के लिए फसल के तीसरे एवं छठे सप्ताह में निराई एवं खरपतवार नाशक के छिड़काव द्वारा किया जा सकता है। खरपतवारनाशक कि अनुशंसित मात्रा के छिड़काव हेतु प्रति हेक्टेयर 500 लीटर पानी का उपयोग आवश्यक है।

जल प्रबंधन

खरीफ के मौसम में उचित समय पर बारिश के न होने या सितम्बर माह में वर्षा के अधिक अंतराल होने से फसल का नुकसान होने का खतरा बना रहता है अतः सिंचाई कि आवश्यकता पड़ती है। वैज्ञानिकों के अनुसंधान में ऐसा पाया गया है कि पानी या नमी की कमी के कारण सबसे विपरीत प्रभाव फलियों में दाने भरने कि अवस्था पर पड़ता है। अतः इस समय पानी या नमी की कमी नहीं होनी देनी चाहिए।बीजांकुरण अवस्था फूल आने की अवस्था अथवा दाना भरने के समय वर्षा का न होने या अंतराल लम्बा होने की अवस्था में तुरंत सिंचाई करना चाहिए। सूखे से बचाव की स्थिति में पोटेशियम नाइट्रेट (1%) या मैग्नीशियम कार्बोनेट या ग्लिसरॉल (5%) का छिड़काव करें।मृदा की नमी को संरक्षित करने के लिए भूसे की पलवार 5 टन/हे. की मात्रा में करना लाभकारी माना गया है।

कटाई एवं गहाई

जब फलियों का रंग हरा से बदल कर मटमैला हो जाता है तो ये फलियों के पकने का संकेत माना जाता है। अतः इस अवस्था में सोयाबीन की कटाई करना उत्तम माना गया है। तत्पश्चात कटी हुई फसल को 2–3 दिन के लिए धूप में सुखाने के बाद थ्रेसर से धीमी गति (350–400 आर पी एम) पर गहाई करना चाहिए। गहाई के समय इस बात का ध्यान रखें की बीज के छिलकों को कोई क्षति न पहुंचे।

भण्डारण

गहाई के बाद बीज को धूप में अच्छे सुखाना चाहिए जिससे की दानों में नमी की मात्रा कम हो जाए। तत्पश्चात इसे ठंडा, नमिरहित एवं हवादार भंडार गृह में भण्डारण करना चाहिए। भण्डारण करते समय सोयाबीन की बोरियों को उचाई से नहीं पटकना चाहिए इससे बीजो के अंकुरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

रोग प्रबंधन

सोयाबीन की चारकोल सड़न *मेक्रोफ़ोमिना फ़ेज़ोलिना* नामक फफूंद के कारण होती है। यह खेतों में पौधों के अवशेषों में या मिट्टी में सर्दी में भी जीवित रहता है और मौसम के आरम्भ में ही पौधों को जड़ों के द्वारा संक्रमित करता है। इसके प्रबंधन के लिए समय–समय पर खाद डालते रहें। बुवाई से तीन–चार सप्ताह पहले खेत को पानी से भर दें। या फिर मिट्टी में नमी बनी रहे। या फिर केप्टान या थायरम 3 से 4 ग्राम प्रति किलो बीज के हिसाब से बीज उपचार करें इसके लिए *ट्राइकोडर्मा हरजियानम* और *ट्राइकोडर्मा विरिडी* के कल्चर का 4 से 5 ग्राम प्रति किलो बीज का भी प्रयोग करना चाहिए। पत्तियों पर लगने वाले रोगों जैसे की पत्ती धब्बा एवं ब्लाइट के प्रबंधन के लिए

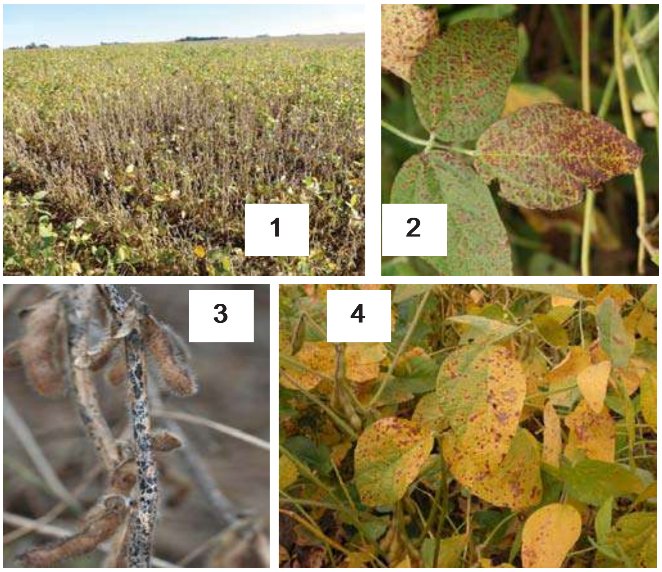

चित्र; सोयाबीन के कुछ प्रमुख रोग. 1: चारकोल सड़न, 2: सेरकोस्पोरा पत्ती झुलसन, 3: अंगमारी पत्ती झुलसन, 4: सेप्तोरिया भूरे धब्बा.
सूत्र; इंटरनेट

बुआई के 35 से 50 दिन के बाद कार्बेन्डाजिम या थेफिनेट मेथाइल का छिड़काव 250 ग्राम / 500 लिटर की दर से करना बहुत कारगर माना गया है। जीवाणु जनित पश्च्युल रोगों के निवारण के लिए रोग प्रतिरोधी किस्में जैसे की ब्रेग, पीके 416, पीएस, 564 एनआरसी 37 आदि की बुआई करने से बहुत हद तक जीवाणु जनित रोगों से बचा जा सकता है। कासुगामाइसिन का छिड़काव 100 ग्राम / 500 लिटर की दर से करना बहुत कारगर माना गया है।

कीट प्रबंधन

सामान्यतः पत्ती खाने वाली इल्लियां एवं तम्बाकू की इल्ली के कारण पौधे की पत्तियां रंगहीन एवं सफ़ेद कागज जैसी दिखने लगती हैं। इस प्रकार के पौधे को नष्ट करने से बहुत हद तक इनके प्रकोप से फसल कि बर्बादी रोकी जा सकती है साथ ही साथ इसके रोकथाम के लिए कीटनानाशकों का प्रयोग करना चाहिए जैसे ट्राइजोफास 25 ई. सी. (0.8 ली./हे.) या क्विनॉलफास 25 ई.सी. या इंडोक्साकारब 15.8 ई. सी. (0.3 ली./हे.) का छिड़काव करें।

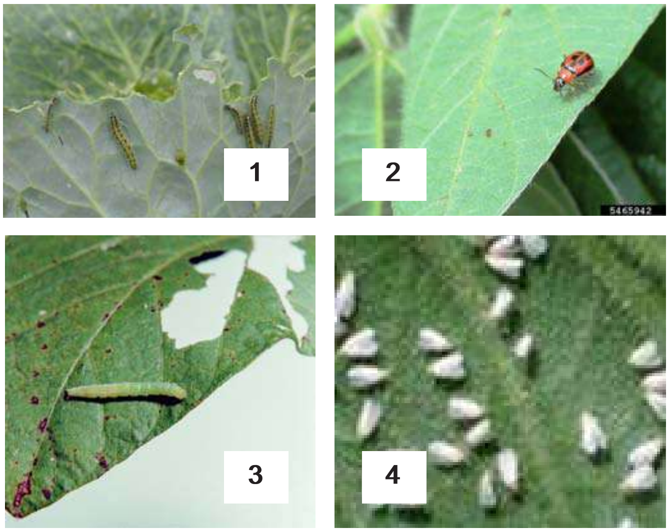

चित्र; सोयाबीन में लगने वाले प्रमुख कीट. 1: कर्तनकीट, 2: नीला या काला भृंग, 3: हरा पत्ती छेदक, 4: सफेद मक्खी.

सूत्र; इंटरनेट

पत्तियों को खाने वाली इल्लियों के रोकथाम के लिए सूक्ष्मजीव आधारित जैविक कीटनाशकों का प्रयोग कर सकते हैं। बैक्टीरिया आधारित – बायोबीट / डायपल / बायोअस्प / डेल्फिन / हाल्ट अथवा फफूद आधारित –बायॉरिन / डिस्पेल / बिओसॉफ्ट 1 ली. प्रति हे. कि दर से फूल आने के पहले या फिर इल्लियों के लक्षण आने के तत्पचात छिड़काव करना चाहिए। इसके लिए खेतों की सतत निगरानी करना चाहिए।

पीला मोज़ैक जो कि सफेद मक्खी के संवाहक के लिए जाना जाता है इस परिस्थिति में बुआई से पहले थायोमेथोक्सोन 30 एफ. ऐस. से 10 ग्रा./किग्रा. से बीजोपचार करने कि सलाह दी जाती है। ब्लू बीटल के प्रकोप से फसल को बचाने के लिए क्विनॉलफास 25 ई.सी. का 1.5 लीटर/हे. कि दर से छिड़काव करने कि सलाह दी जाती है।

उत्तर भारत के राज्यों जैसे की उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, उत्तराखंड एवं हिमाचल प्रदेश के कुछ क्षेत्र जहां की मिट्टी काफी उपजाऊं है, वहां सोयाबीन की उत्त्पादन की प्रबल संभावनाएं हैं। देश के उत्तर पश्चिम क्षेत्रों जैसे की पंजाब एवं हरियाणा में मृदा की गिरती सेहत और फसल विवधिता की बढ़ोतरी के लिए सोयाबीन की खेती एक उम्दा विकल्प के साथ साथ किसानों की बढ़ती आमदनी का एक अच्छा श्रोत हो सकती है।

गन्ने की फसल में समेकित कीट प्रबन्धन

देवा राम बाजिया*, हरीश कुमार** एवं विजय सिंह जाटव**
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर एवं एटिक** पूसा, नई दिल्ली

गन्ना प्राचीनकाल से ही भारत की एक प्रमुख फसल रही है तथा चीनी का एक प्रमुख स्त्रोत रही है। आज भारत में गन्ने का उत्पादन 24.3 मि0टन0 है लेकिन कई कीट–व्याधियाँ के कारण इसका उत्पादन कम हो जाता है इसलिए इनका प्रबन्धन अतिआवश्यक है। गन्ने की फसल में लगभग 200 कीट नुकसान पहुँचाते है, लेकिन इनमें से एक दर्जन के लगभग कीट अधिक हानिकारक हैं जो गन्ने के विभिन्न भागों को नुकसान पहुँचाकर गन्ने के उत्पादन में 15–20 प्रतिशत तक कमी कर देते है। कीट एवं उनके एकीकृत प्रबन्धन की निम्न विधियाँ है।

भूमिगत कीट:

दीमक (*ओडोन्टोटर्मिस ओबेसेस एवं माइक्रोटरर्मिस ओबेसाई*) :–

हानि का स्वरूप एवं समय

ये जमीन में रहती है तथा क्रीमी रंग की व मुलायम शरीर वाली होती है। इस कीट के श्रमिक गन्ने की बुआई के बाद गन्ने के टुकड़ों (पैन्डों) के सिरों एवं टुकड़ों पर उपस्थित आंखों पर आक्रमण करके हानि पहुंचाते हैं। यह कीट जमते हुए एवं बढ़े हुए गन्ने के पौधों को भी हानि पहुँचाता है। ये बोये गये गन्ने के टुकड़ो को एवं पौधों दोनो को हानि पहुंचाती है, जिससे पौधों की पत्तियाँ पीली पड़ कर सूख जाती है। ये कीट भूमि के पास वाली गन्ने की नीचे की पोरियों का पिथ खा जाते हैं एवं पिथ के स्थान पर मिट्टी भर जाने से फसल को काफी हानि होती है। इस कीट का प्रकोप वर्षा (मानसून) प्रारम्भ होने से पहले मई–जून के महीने मे एवं वर्षा (मानसून) समाप्त होने के बाद सितम्बर–अक्टूबर के महीने में सबसे अधिक होता है।

प्रबन्धन विधियाँ

- मानसून की पहली भारी वर्षा के बाद शाम के समय पंखधारी नर एवं मादा दीमक नई कालोनी बसाने के लिये बिजली के प्रकाश में बल्बों के पास हजारों की संख्या में मैथुन करने हेतु आते हैं। इन कीटों को नियन्त्रित करने के लिये बल्बों के नीचे जमीन पर लिन्डेन धूल का बुरकाव कर देते हैं। जिससे मैथून उपरान्त पंख टुटने के बाद नर एवं मादा दीमक कीट जमीन पर गिरते हैं और बखेरे गये कीट नाशक के सम्पर्क में आकर मर जाते हैं।
- खेत के आसपास उपस्थित दीपक के घरों (दीमकोलो) को नष्ट करके उनके ऊपर क्लोरपाइरिफॉस 20 ई0सी0 (4 मिली0 प्रति लीटर पानी) के घोल का छिड़काव करें या दीमकोलो के अन्दर फोरेट 10 जी, एल्यूमिनियम फास्फाइड, या सेल्फास की गोलियों का प्रयोग करें।
- सड़े हुए गोबर की खाद का प्रयोग करें एवं फसल कटने पर खेत की गहरी जुताई एवं फसल अवशेष नष्ट करें। दीमक प्रभावित खेत में सिचाई की संख्या बढ़ायें। गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करें।
- *बावेरिया बेसियाना* की 5 किग्रा0 मात्रा 25–30 किग्रा0 सड़े हुये गोबर की खाद मे मिलाकर प्रति हे0 के हिसाब से खेत की तैयारी के समय खेत मे बखेर दें।
- बुवाई के समय कूड़ों में बोये गये गन्ने के टुकड़ों के ऊपर क्लोरपाइरिफॉस 20 ई0सी0 4.0–5.0 लीटर प्रति हे0 या लिन्डेन 20 ई0सी0 6.5 लीटर प्रति हे0 1500 लीटर पानी में मिलाकर प्रयोग करें।
- खड़ी फसल मे दीमक का प्रकोप होने पर क्लोरपाइरिफॉस 20 ई.सी. 5 लीटर प्रति हे0 या लिन्डेन 20 ई.सी. 6.5 लीटर प्रति हे0 सिंचाई के पानी के साथ प्रयोग करें। यदि फसल छोटी अवस्था में है तो उपरोक्त बताये गये किसी एक कीटनाशक की मात्रा को 50 किग्रा0 सूखे रेत में मिलाकर प्रति हे. खेत में बिखेर कर सिंचाई कर दें।

गुबरेला (सफेद गिडार), *होलोट्रेकिया* प्रजाति

हानि का स्वरूप एवं समय

इस कीट की प्रौढ़ एवं सूंड़ी (गिडार) अवस्था दोनों ही हानिकारक हैं। प्रौढ़ कीट पेड़ पौधें की पत्तियों को खाकर हानि पहुँचाते हैं जबकि सूंड़ी जमीन के अन्दर रहकर पौधों की जड़ों, तथा जड़ों पर उपस्थित रोयों आदि को खाकर फसल को काफी नुकसान पहुंचाते हैं। इस कीट का प्रकोप जुलाई–अक्टूबर तक अधिक होता है।

प्रबन्धन विधियाँ

- गर्मी के मौसम में मानसून से पहले होने वाली वर्षा के तुरन्त बाद खेत पर उपस्थित सभी पेड़ों के ऊपर मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. (1 मिली0 प्रति लीटर पानी) का छिड़काव कर दें जिससे वर्षा के बाद जमीन से निकलकर वृक्षों पर आश्रय लेने वाले प्रौढ़ कीट, कीटनाशक से उपचारित वृक्षों की पत्तियाँ खाकर मर जायें।
- वर्षा के तुरन्त बाद खेत मे जगह–जगह पर नीम की टहनियाँ लगा देनी चाहिए। रात्रि के समय सभी वृक्षों एवं टहनियों को हिलाकर प्रौढ़ कीटों को इकट्ठा कर नष्ट कर देना चाहियें। यह प्रक्रिया वर्षा के बाद लगातार 3–4 रातों तक करें।
- अगस्त के महीने मे खाली पडें खेतों की गहरी जुताईयां करनी चाहिए ताकि मिट्टी में छिपी सूड़ियां जमीन के ऊपर आ जाये। जिससे चिड़िया, मैना, आदि पक्षी उन्हें खा जाये।
- खेत की तैयारी के समय फोरेट 10 जी 25 किग्रा प्रति हे0 अथवा मिथाइल पैराथियॉन (फोलीडॉल) 2 प्रतिशत धूल 30 कि0ग्रा0/हे0 की दर से मिट्टी में मिला दें।
- फसल में प्रकोप होने पर 20 कि0ग्रा0 प्रति हे0 फोरेट 10 जी सूखे रेत मे मिलाकर गन्ने की लाइन के पास डालकर सिंचाई कर दें।

छेदक कीट

अंकुर बेधक (प्ररोह बेधक या अर्ली सूटबोरर) *काइलो इनफस्कैटेलस* :–

हानि का स्वरूप एवं समय

इस कीट की सूंड़ी ही फसल को नुकसान पहुंचाती है। सूंड़ी छेद करके प्ररोह के अन्दर घुस जाती है एवं पौधे को अन्दर से काट देती है, जिससे पौधे को मिलने वाली पोषक तत्वों एवं पानी की सप्लाई रूक जाती है। जिसके कारण पौधे के बीच की पत्ती सूख जाती हैं। जिसे मृत गोफ कहते हैं। इस मृतगोफ को आसानी से खींचा जा सकता है जिसको सूंघने पर बदबू आती है। इस कीट का प्रकोप मार्च–जून तक रहता है।

प्रबन्धन विधियाँ

- गन्ना जमाव के बाद गन्ने की पक्तियों के मध्य 8 कु0 प्रति हे0 की दर से सूखी पत्ती बिछानी चाहिए।
- कीटग्रसित पौधे को जमीन के स्तर से काटकर नष्ट कर दें।
- सिंचाई की संख्या बढ़ा दें।
- *ट्राइकोग्रामा किलोनिस* नामक अण्ड परजीवी के 50,000–1,00,000 अण्डें प्रति हे0 मार्च के आखरी सप्ताह से प्राराम्भ करके 5–6 बार 8–10 दिन के अन्तराल पर पत्ती के नीचे लगायें। इसके लिए *ट्राइकोकार्ड* को लगभग 10 टुकड़ों मे काटकर लगा दें।
- सूखी गोभ खींचकर पौधे में आवश्यकता पड़ने पर फसल के ऊपर फिप्रोनिल 5 एस0सी0 (1.0 ली प्रति है0) या कार्टप हाईड्रोक्लोराइड 50 एस0पी0 (1.0 किग्रा0 प्रति है0) छिड़काव करे
- कार्टप हाईड्रोक्लोराइड 4 जी0 या फिप्रोनिल 0.3 जी0 आर0 या फोरेट 10 जी, 25 किग्रा0 प्रति हे0 की दर से सूखे रेत या राख में मिलाकर गन्ने की लाइन के पास डालकर खेत की सिंचाई कर दें।

जड़ बेधक (*इम्मेलोसेरा डेप्रेसिला*)

हानि का स्वरूप एवं समय

इस कीट का प्यूपा सफेद रंग का व बिना धारी का होता है। इस कीट की सूंड़ी अवस्था हानिकारक होती है, जो भूमि के अन्दर उपस्थित तने के अन्दर घुसकर उसे अन्दर से काट देती है। जिससे ग्रसित पौधे की गोभ सूख जाती है जिसे आसानी से नही खींचा जा सकता है एवं न ही इससे दुर्गन्ध आती है। इस कीट का प्रकोप अप्रैल–जून तक होता है।

प्रबन्धन विधियाँ

- गन्ना बुवाई से पूर्व खेत की गहरी जुताई करें एवं पहली फसल के सभी अवशेषों को एकत्र कर जला दें।
- प्रभावित पौधों को जड़ से उखाड़कर नष्ट कर दें।
- बुवाई के समय क्लोरपाइरिफॉस 20 ई0सी0 4–5 लीटर प्रति हे0 की दर से 1500 लीटर पानी में घोलकर कूड़ों में बोये गये गन्ने के टुकड़ों के ऊपर प्रयोग करें।

चोटी बेधक (*सरपोफेगा निवेला*)

हानि का स्वरूप एवं समय

इस कीट की हानिकारक अवस्था सूंड़ी है। इसकी सूंडी जुलाई से अक्टूबर तक पत्तियों के बीच नस में सुराख करती है तथा फिर नीचे की ओर बढ़ती है। प्रौढ़ का आगमन मार्च के महीने में हो जाता है। इसकी प्रथम पीढ़ी के अण्ड़े मार्च के महीने एवं दूसरी पीढ़ी के अण्डे मई के महीने में पत्तियों की निचली सतह पर दिये जाते हैं जो लाल भूरे रंग के रोयों द्वारा ढके रहते हैं। अप्रैल के महीने में प्रथम पीढ़ी की सूंड़ी के प्रकोप से एवं जून के महीने में दूसरी पीढ़ी की सूंड़ी के प्रकोप से फसल में ग्रसित पौधे पूर्णतया सूख जाते हैं। इस कीट की तीसरी एवं चौथी पीढ़ी की सूंड़ी द्वारा फसल को सबसे अधिक हानि होती है। जिससे पौधे के बीच की गोभ सूख जाती है एवं गोभ के आसपास की पत्तियों पर छोटे–छोटे छर्रो जैसे छेद दिखाई देते है। पत्तियों की मध्य सिरा मे लाल रंग की नलिका मौजूद होती है, जिसके माध्यम से सूंड़ी अगोले में प्रवेश करती है। इस कीट का प्रकोप अप्रैल से अक्टूबर तक रहता है।

प्रबन्धन विधियाँ

- मार्च एवं मई के महीनों में पत्ती समेत अण्ड़ो को नष्ट करें।
- अप्रैल एवं जून में प्रभावित पौधों को जड़ समेत उखाड़कर नष्ट करें।
- *ट्राइकोग्रामा जेपोनिकम* नामक अण्ड परजीवी के 50,000–1,00,000 अण्डे प्रति हे0 मार्च के आखरी सप्ताह से प्रारम्भ करके 5–6 बार 8–10 दिन के अन्तराल पर पत्ती के नीचे लगायें। इसके लिए *ट्राइकोकार्ड* को लगभग 10 टुकड़ों में काटकर लगा दें।
- आवश्यकता होने पर जून के अंतिम सप्ताह या जुलाई के प्रथम सप्ताह में कार्बोफ्यूरान 3 जी0 25–30 किग्रा0 प्रति हे0 की दर से सूखे रेत में मिलाकर गन्ने की लाइन के समीप डालकर सिंचाई कर दें।

गुरदासपुर बेधक (*बिसेटिया स्टीनिएलस*)

हानि का स्वरूप एवं समय

इस कीट की हानिकारक अवस्था सूंड़ी है, जो आंखों के माध्यम से पोरी के अन्दर घुस जाती है एंव ऊपर से दूसरी या तीसरी पोरी को चारों तरफ से आरी की तरह से काट देती है। जिससे सबसे पहले ऊपर से तीसरी पत्ती सूख जाती है एवं बाद मे पूरा अगोला सूख जाता है। इस कीट का प्रकोप फसल में जून से प्रारम्भ होकर अगस्त महीने तक रहता है। सूंड़ी ऊपर की ओर से दूसरे पर्व में सुराख बनाती है और कुछ दिन वहॉ रहने के बाद धीरे–2 नीचे की ओर बढ़ती है।

प्रबन्धन विधियाँ

- जुलाई–अगस्त के महीने में खेत को किसी ऊँचें स्थान पर चढ़कर देखने पर गन्ना फसल में कीट द्वारा ग्रसित पौधों के सूखे अगोले दिखाई देते हैं जिन्हें तीसरी पोरी के नीचे से काटकर नष्ट करें।
- ट्राइकोग्रामा प्रजाति का ऊपर बताये गये अनुसार प्रयोग करें।

गन्ना बेधक (*काइलो ओरीसीलिया*)

हानि का स्वरूप एवं समय

इस कीट की नुकसान करने वाली अवस्था सूंड़ी है। जिसका प्रकोप पौधों में तने के ऊपर से पत्तियाँ हटाकर देखा जा सकता है। प्रभावित गन्ने में छिद्र दिखाई देते है, जिससे सूंड़ी का मल बाहर निकलता रहता है। इस कीट का प्रकोप जुलाई से नवम्बर तक रहता है।

प्रबन्धन विधियाँ

- अगस्त से अक्टूबर तक 20 दिन के अन्राल पर छिड़काव करें। जिसके लिये फिप्रोनिल 5% एस.सी.

1.5 लीटर या मोनोक्रोटोफॉस 36 एस0एल0 1 लीटर या क्यूनालफॉस, 20 ई0सी0 या 1.5 लीटर प्रति हे0 की दर से 700 – 800 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

- कीटनाशक का छिड़काव बदल–बदल कर करें।

पोरी बेधक (*काइलो सेकेरिफेगस*)

हानि का स्वरूप एवं समय

इस कीट की सूंड़ी अवस्था पहले पौधें की मध्य पत्तियों को नुकसान पहुंचाती हैं, फिर एक सप्ताह बाद ऊपर की मुलायम पोरी में छेद करके घुस जाती है। जिससे पोरी सख्त हो जाती हैं। इसके प्रकोप से गन्ने के रस में चीनी कम हो जाती है एवं आंखे खड़ी फसल में ही अंकुरित हो जाती हैं जिससे इस कीट से प्रभावित फसल को बीज के लिए प्रयोग में नही लाया जा सकता है। यह कीट जून–दिसम्बर तक सक्रिय रहता है।

प्रबन्धन विधियाँ

- अगस्त से अक्टूबर तक 20 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें। जिसके लिए प्रोफेनोफॉस 50 ई0सी0 1.5 लीटर या मोनोक्रोटोफॉस 36 एस0एल0 1 लीटर या क्यूनालफास, 20 ई0सी0 या 1.5 लीटर प्रति हे0 की दर से 700–800 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
- कीटनाशक का छिड़काव बदल–बदल कर करें।

रस चूसने वाले कीट

पाइरिला (*पाइरिला परपुसिला*) :–

हानि का स्वरूप एवं समय

इस कीट के प्रौढ़ एवं शिशु दोनों ही पत्तियों से रस चूसकर फसल को हानि पहुंचाते हैं। इस कीट द्वारा पत्तियों के ऊपर एक मीठा लसलसा पदार्थ छोड़ा जाता हैं जिसके ऊपर काली फंफूदी द्वारा आक्रमण कर देने से पत्तियाँ काली पड़ जाती हैं जिससे पौधों में भोजन बनाने की क्रिया एवं गन्ने के रस में शर्करा की मात्रा दोनों ही कम हो जाती हैं। इस कीट का अधिक प्रकोप जून से अक्टूबर तक रहता है।

प्रबन्धन विधियाँ

- गन्ने की संकरी पत्तियों वाली प्रजातियों की वुबाई करें।
- खेत का निरीक्षण करके पाइरिला के अण्डों वाली पत्ती को काटकर नष्ट कर दें।
- इपिपाइरोपस (इपिरिकेनिया) मिलानोल्यूका परजीवी के कोकून लगी ज्वार की पत्तियों को गन्ने के खेत में जगह–जगह लगायें।
- गन्ने के खेत में बाहर से लाकर *इपिपाइरोपस (इपिरिकेनिया) मिलानोल्यूका* के 4000–5000 कोकून या 40,000–50,000 अण्डे प्रति हे0 प्रयोग करें।
- परजीवी की अनुपस्थिति होने पर मैलाथियान 5 प्रतिशत धूल या मिथाईल पैराथियान 2 प्रतिशत धूल 30 किग्रा0 प्रति हे0 की दर से बुरकाव करें या मैलाथियान 50 ई0सी0 1 लीटर अथवा प्रोफेनोफॉस 50 ई0सी0 1.25 लीटर प्रति हे0 की दर से 700–800 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

काला चिट्टा (*कावेटेरियस एक्सकेवेट्स*)

हानि का स्वरूप एवं समय

इस कीट के प्रौढ़ एवं शिशु दोनों ही गर्मी के मौसम में फसल के पौधों की गोभ में घुसकर मुलायम पत्तियों से रस चूस लेते हैं जिससे पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं एवं पौधों की बढ़वार रूक जाती हैं। अधिक प्रकोप होने पर पत्तियों के किनारे सूखने लगते हैं एवं पौधे मुरझाने लगते हैं। पेड़ी फसल में यह ज्यादा लगता है। इस कीट का प्रकोप फरवरी–जून तक रहता है।

प्रबन्धन विधियाँ

- इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस0 एल0 250 मिली लीटर प्रति हे0 700–800 लीटर पानी मे घोलकर छिड़काव करें।

सफेद मक्खी (*एलेरोल्यूबस बेरोडेनसिस*)

हानि का स्वरूप एवं समय

इस कीट के शिशु पत्तियों की कोशिकाओं से रस चूसते हैं जिससे पत्तियों पर पीली धारियां सी पड़ जाती है एवं फसल का रंग पीला हरा सा दिखाई देता है। इस कीट का प्रकोप निचले पानी के भराव वाले क्षेत्रों में अधिक

होता है। अगर पेड़ी फसल में नाट्रोजन की कमी रह जाती है तो भी इस कीट का प्रकोप बढ़ जाता है। इस कीट का प्रकोप जून से अक्टूबर तक होता है।

प्रबन्धन विधियाँ

- मैलाथियॉन 50 ई0सी0 (1 मि0ली0 प्रति लीटर पानी) कीटनाशक द्वारा बीज उपचार करें।
- गन्ने से कीट ग्रसित पत्तियों को हटा दें।
- पत्तियां हटाने के बाद फसल पर मैलाथियॉन 50 ई0सी0 1 लीटर प्रति हे0 की दर से 700–800 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

मिली बग (*सेकेरीकोकस सेकेराई*)

हानि का स्वरूप एवं समय

इस कीट के प्रौढ़ एवं शिशुओं द्वारा लगातार फसल के पौधें से रस चूसने के कारण गन्ने की पोरी बीच में से पतली हो जाती है एवं उसके ऊपर उपस्थित आंखें भी खराब हो जाती हैं। इस तरह से कीट द्वारा ग्रसित फसल की पत्तियां पीली पड़ने के कारण बीमार सी दिखाई देती हैं एवं गन्ने के रस में शर्करा की मात्रा भी कम हो जाती है। इस कीट का प्रकोप सूखे की स्थिति में सभी मौसमों में होता है।

प्रबन्धन विधियाँ

- गांठों के ऊपर से पत्तियां हटाकर मैलाथियान 50 ई0सी0 1 लीटर प्रति हे0 की दर से 700–800 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

थ्रिप्स

हानि का स्वरूप एवं समय

इस कीट के प्रौढ़ एवं शिशु फसल की छोटी अवस्था में पत्तियों के निचले हिस्से से रस चूसते हैं जिससे पत्तियाँ सिकुड़कर गोल हो जाती हैं। इस कीट का प्रकोप मई–जून के महीने में होता है।

प्रबन्धन विधियाँ

- फसल के ऊपर इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस0 एल0 250 मिली लीटर प्रति हे0 दर से 700–800 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

अन्य कीट

टिड्डा (*हैरोग्लाइफस प्रजातियाँ*)

हानि का स्वरूप एवं समय

इस कीट की प्रथम एंव द्वितीय पीढ़ी के शिशु खेत में मेढ़ों के ऊपर उपस्थित घास के ऊपर भोजन करके जीवन निर्वाह करते हैं। तीसरी पीढ़ी के कीट गन्ने की फसल में चले जाते हैं जो पत्तियों को काटकर नुकसान पहुंचाते हैं। इस कीट का फसल में प्रकोप जुलाई से अक्टूबर तक रहता है।

प्रबन्धन विधियाँ

- मई–जून में मेड़ों, नाली, ट्यूबवैल आदि के पास खाली पड़ी जगह की खुदाई कर अण्डों को नष्ट करें।
- कीट की दूसरी एवं तीसरी पीढ़ी के नियन्त्रण हेतु खेतों की मेड़ों पर जुलाई में फॉलीडाल 2 प्रतिशत धूल का 25 किग्रा0 प्रति हे0 की दर से बुरकाव करें।
- गन्ने की फसल पर मैलाथियान 5 प्रतिशत या फालीडाल 2 प्रतिशत धूल का 25 किग्रा0 प्रति हे0 की दर से बुरकाव करें या एन0एस0के0ई0 5 प्रतिशत या बायोनीम 2 लीटर प्रति हे0 की दर से 700–800 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

स्लग कैटरपिलर (*पैरासा बाइकोलोर*)

हानि का स्वरूप एवं समय

इस कीट की गिडार बहुत सुस्त होती है परन्तु फसल के पौधों की पत्तियों को तेजी से खाकर नुकसान पहुँचाती हैं। खेत मे काम करने वाले किसानों, मजदूरों का शरीर अगर इस कीट से छू जाता है तो शरीर में बड़ी तेज खुजली लगती हैं। इस कीट का प्रकोप जून से अक्टूबर तक रहता हैं।

प्रबन्धन विधियाँ

- मैलाथियान 5 प्रतिशत या फॉलीडाल 2 प्रतिशत धूल 25 किग्रा0 प्रति हे0 की दर से बुरकाव करें या प्रोफेनोफॉस 50 ई0सी0 1.0 लीटर प्रति हे0 की दर से 600–700 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

खरीफ फसलों के प्रमुख कीट, उनका निदान एवं प्रबंधन रणनीतियाँ

सुरेश एम. नेबापुरे, भाग्यश्री एस. एन., रजना एस. एवं अर्चना अनोखे
कीट विज्ञान संभाग, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

एकीकृत (समेकित) कीट प्रबंधन (आईपीएम) कीट नियंत्रण की महत्वपूर्ण तकनीकी है। आईपीएम तकनीकी का प्रमुख उद्देश्य फसल के नुकसान को कम करना और यह सुनिश्चित करना है कि वातावरण कम से कम प्रदूषित करें, प्रबंधन में स्थिरता सुनिश्चित करें, रसायनों के कारण खाद्य श्रृंखला में दुष्प्रभाव की संभावनाओं को कम करें, खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करें और साथ ही साथ उत्पाद की गुणवत्ता और मात्रा बनाए रखें । यह भी सुनिशचित करें की कीड़ों में कीटनाशकों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता विकसित न हो। विश्व स्तर पर विभिन्न फसलों में कीटों के कारण लगभग 10.8 प्रतिशत नुकसान होता है जबकि भारत में वर्तमान में लगभग 17.5 प्रतिशत फसल का नुकसान होता है जिसका मूल्य लगभग 8.63 मिलियन रुपये है। कीटों से होने वाले नुकसान के अनुचित निदान के कारण अधिकांश कीड़े अनियंत्रित हैं। इसलिए, खेत की फसलों के प्रमुख कीटों के निदान के लिए यहां कुछ क्षति निदान प्रस्तुत किए गए हैं।

महत्वपूर्ण फसलों के मुख्य कीटों के क्षति का पहचान तथा उनका निवारण

धान

1. **तना छेदक (*स्किर्पोफागा इंसर्टुलस और सेसामिया इन्फेरेंस*)** : अंडे से बाहर आने पर इल्लीया तने में प्रवेश करती हैं और तने के अंदर खनन करते हुए भोजन करते हैं। इल्लीया मुख्य शूट/तने को जमीनी स्तर से काटती है जिसके परिणामस्वरूप पौधे का ऊपरी भाग सूख जाता है और युवा पौधों में मध्य तना सुख जाता है जिसे "डेड हार्ट्स" कहते हैं। इल्लीयां बड़ी होने के बाद पुष्पगुच्छ को खाती हैं जिसके परिणामस्वरूप धान की फल्लियां खोखली हो जाती है जिसे "चाफ़्फ़ी ग्रेन्स" (खोकले बीज) कहते है। इसे "व्हाइट इयर्स" भी कहा जाता है, जो की आसानी से बाहर खिचकर अलग किया जा सकता है ।
2. **पत्ता लपेटक (*नेफ्याक्रोसिस मेडिनालिस*):** इस कीट की इल्लीया पत्तों के दोनों किनारो को रेशमी धागों के मदत से जोड़ देती है और फिर उसके अंदर खाती रहती है जिससे पत्ते सफेद झिल्लीदार दिखने लगते है। अधिक प्रकोप होने पर पूरी फसल सूख कर झुलस जाती है।
3. **प्लांट हॉपर (*नीलापर्वता लुजेन्स, सोगाटेल्ला फुर्सिफेरा*):** इन कीटों के शिशु और वयस्क दोनों तने और पत्ती के आवरण से रस चूसते हैं और इसके परिणामस्वरूप प्रभावित पौधे पीले हो जाते हैं। इन लक्षणों को 'हॉपर बर्न' कहा जाता है और गंभीर रूप से प्रभावित पौधे सूख कर गिर जाते हैं। अधिक प्रकोप के कारण खेत में जगह–जगह पर झुलसे हुए पौधे दिखते हैं।

धान की फसल में समेकित कीट प्रबंधन

1. फसल की कटाई जमीन के नजदीक से करनी चाहिए।
2. प्रतिरोधी किस्म की बुआई का चयन करें।
3. धान की रोपाई के समय पत्तियों के ऊपरी सिरे को काटकर अलग कर देने से तना छेदक अथवा हिस्पा के अंडों का नाश हो जाता है।
4. गॉल मिड्ज से बचाव के लिए जल्दी रोपाई करना चाहिए।
5. 20 cm × 2 m के गलियारों का स्थान छोड़ने पर प्लांट हॉपर से बचाव किया जा सकता है।
6. अधिक मात्रा में नत्रजन उर्वरक का उपयोग नहीं करना चाहिए।
7. कीट नियंत्रण में वानस्पतिक कीटनाशक जैसे नीम तेल का प्रयोग करें।

8. रासायनिक कीटनाशक का प्रयोग तभी करना चाहिए जब कीटों की संख्या आर्थिक दहलीज स्तर से अधिक हो जाए।

मूंगफली

1. **मूंगफली पर्ण सुरंगख (*एप्रोरेमा मॉडीसेल्ला*):** इस कीट की प्रारंभिक अवस्था में सूंडिया पर्ण सुरंगख के रूप में कार्य करती हैं और बाद में पूरे पत्ते को खा जाती हैं। जैसे–जैसे खाने की मात्रा बढ़ता है, खदान का आकार बढ़ते जाता है, अंतः पर्ण भूरे रंग के हो कर सिकुड़ जाते हैं और अंत में धब्बे बन जाते हैं । गंभीर संक्रमण में पत्तियां पूरी तरह से सूख जाती हैं और जली हुई दिखाई देती हैं। पौधे की शक्ति समाप्त हो जाती है अंत में प्रभावित पौधों में फली का भरना प्रभावित हो जाता है।
2. **लाल रोयेंदार सूँडी (*ऑमसक्टा अल्बीस्ट्रागा*) और काले रोयेंदार वाला/ बिहारी रोयेंदार इल्ली/ सूँडी:** अंडे से निकलने वाले अभ्रक युवा पत्ती के निचले हिस्से पर खाते हैं जिससे पत्ता जालीदार बन जाता है। बाद में सूँडी डंठल को छोड़कर सम्पूर्ण पत्तियों को खा जाते हैं। सूँडी एक खेत से दूसरे खेत में चले जाते है। प्रभावित खेत मवेशियों के द्वारा चरा हुआ सा दिखाई देता है।
3. **मूंगफली चेपा (*एपिस क्राक्सीवोरा*):** इस चूसक कीट के शिशु और वयस्क दोनों पत्तों और कोमल प्ररोहों से रस चूसते हैं, जिसके परिणामस्वरूप कोमल पत्तियां और अंकुर मुरझा जाते हैं। यह खासकर गर्मी के मौसम के दौरान जादा प्रकोप करता है। पत्तियाँ हरे रंग के साथ धब्बेदार बन जाती हैं, पौधे रूखे हो जाते हैं तथा मधुरस का श्राव होने से चींटियां आकर्षित होती हैं। चेपा मूंगफली रोसेट रोग एवं मूंगफली मोज़ेक विषाणु के रोगवाहक/वेक्टर के रूप में कार्य करता है।
4. **पर्णफुदक/पातफुदक (*एम्पोस्का केरी*):** इस चूसक कीट के शिशु और वयस्क पत्तों के सतह के नीचे से रस चूसते हैं और पत्ती के किनारे को पीला कर देते है जो अंत में फुदकदाह (हॉपर बर्न) के लक्षण का कारण बनता है। भारी संक्रमण के कारण पत्तों के सिरे के पास बौनापन और पीलापन आ जाता है।
5. **मूंगफली थ्रिप्स (*स्कीर्टोथ्रीस डोरसौलिस*):** वयस्क काले तथा शिशु पीले रंग के होते हैं, यह मूंगफली की कली के ऊतकक्षय विषाणु का छोटा रोगवाहक है। शिशु और वयस्क दोनों ही रस चूसते है, जिससे पत्तियों की निचली सतह पर पीले हरे धब्बे दिखते हैं।

मूंगफली की फसल में समेकित कीट नियंत्रण

1. कीट की संख्या का आकलन करने के लिए नियमित तौर पर निगरानी रखनी चाहिए ताकि उचित वक्त पर रोकथाम कर सके।
2. क्षतिग्रस्त पौधों के भागों को नष्ट कर देना चाहिए।
3. फसलचक्र की विधि का प्रयोग करें ताकि कीट के जीवनचक्र को तोड़ा जा सके।
4. सोयाबीन की फसल का 'ट्रैप फसल' के रूप मे उपयोग करें।
5. प्रकाश ट्रैप अथवा फेरोमॉन ट्रैप का उपयोग करें।

अरहर

1. **अमेरिकन फली छेदक (*हेलीकोवर्पा आर्मीजेरा*):** यह व्यापक वितरण के साथ एक अत्यधिक बहुभोजनीय (पॉलीफैगस) कीट है। पहले इंस्टार लार्वा हरी पत्तियों को खुरच कर खाते हैं फिर फूल, फूल की कलियों और फलियों में छेद कर देते हैं । आधा शरीर फली के अंदर और आधा बाहर रखते हैं जिससे फली में गोल छेद हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप फली खराब हो जाती है।
2. **चित्तीदार फली छेदक (*मरुका विट्राटा*):** इस किट की मादा फूलों, कलियों और कोमल टहनियों पर बिखरे अंडे देती है। अंडे से बाहर आने के बाद लार्वा कलियों, फूलों और कोमल फलियों में छेद करते हैं, बाद में वेब (जाल) बनाकर फूल और पत्तीयों पर फीड करते हैं।
3. **फली मक्खी (*मेलॉनोग्रोमाईज़ा ऑब्टुसा*):** वयस्क मक्खियाँ फली की दीवार पर सिगार के आकार के अंडे देती हैं। शिशु पहले बीज के वाह्यत्वचा के ठीक नीचे गैलरी बनाकर बीजों को खाते हैं फिर आंशिक रूप से अनाज खाते हैं और पूरे बीज को खोखला बना देते है तथा उपभोग के लिए अनुपयुक्त कर देते हैं।

4. **फली चूसने वाले हेटरोप्टेरान कीड़े (बग)**: ये कीड़े पत्तियों, तना, टहनियों और फली सहित पौधों के कोमल भागों पर अंडे देते हैं। अंडे से निकलने के बाद शिशु फली की सतह के माध्यम से विकसित होने वाले बीजों का रस चूसने लगती हैं। बीजों से रस चूसने से बीजों पर काले धब्बे पड़ जाते हैं और सिकुड़ जाते हैं, इसके बाद मृतजीवी फफूंद (सैप्रोफाइटिक फंगस) का विकास होता है जिससे बीज अंकुरण के लिए और उपभोग के लिए भी अनुपयुक्त हो जाते है।
5. **ब्लिस्टर बीटल (फफोला भृंग) (*माइलेब्रिस पुस्टुलेटा*)**: इस कीट की मादाएं मिट्टी में अंडे देती है और शिशु अभ्रक मिट्टी में रहते हुए टिड्डे के अंडे खाते है। आमतौर पर सितंबर महीने मे वयस्क की गतिविधि अधिकतम पाई जाती है। हानिकारक अवस्था में वयस्क, फूल, कोमल फली और नई पत्तियों को खाते हैं जिसके परिणामस्वरूप फली कम मात्रा में होती है। वयस्क मध्यम से बड़े (लंबाई में 2.5 सेमी.) होते हैं, आमतौर यह बड़े पीले धब्बों के साथ काले रंग के होते हैं और पेट पर एक लाल पट्टी होती है, जो कभी–कभी पीले धब्बों में बदल जाती है। वयस्क ज्यादातर सुबह के समय धीमी गति से चलते हैं, उन्हें उचित सुरक्षा के साथ हाथ से इकट्ठा कर के नष्ट किया जा सकता है।

अरहर मे समेकित किट प्रबंधन

1. कटाई के उपरांत गहरी जुताई करें ताकि मिट्टी में होने वाले किट की अवस्थाओ को खत्म किया जा सके।
2. खेत की स्वच्छता, फसल के अवशेष के हिस्सों को समय पर खेतों से हटा दे।
3. खेत मे पंछियों को बैठने के लिए "पक्षी पर्च'' (प्रति 50/हेक्टर) लगाए।
4. जैविक पक्षी पर्च के रूप में बुवाई के समय 5 ग्राम रबी ज्वार या सूरजमुखी के बीज भी मिलाएं।
5. कीट निगरानी के लिए फेरोमोन ट्रैप (पाश) प्रति 5/एकड़ लगाएं।
6. कीट नियंत्रण के लिए प्रकाश पाश (1 प्रकाश पाश/5 एकड़) लगाएं।
7. ट्राइकोग्रामा किलोनिस प्रति 1.5 लाख/हेक्टर प्रति सप्ताह की दर से चार सप्ताह छोड़ें।
8. अमेरिकन बोलवर्म, हेलिकोवर्पा आर्मीजेरा से बचाव के लिए 5% नीम की गुठली का उद्वरण (नीम सीड करनल एक्सट्रैक्ट) 1% साबुन के घोल के साथ मिलाकर छिड़काव करें।
9. HaNPV (एच ए एन पी वी) 500 एल ई (LE) प्रति हेक्टर को 0.1% टीनोपोल और 0.5% गुड़ में मिलाकर छिड़काव करने से अमेरिकन बॉलवर्म की समस्या से निजात पाया जा सकता है।

गन्ना

1. **गन्ना अंकुर छेदक/अगेती प्ररोह छेदक (*काइलो इनफ्यूसकेटेलस*)**: अंडे से बाहर आने के बाद, सूँडी रेशमी धागे के जरिये फैलते हुएपत्ती और तने के बीच में छेद करते है और जमीनी स्तर से ठीक ऊपर तने में आ जाते है। केंद्र में बढ़ते अंकुर पर खाते हैं जिसके परिणामस्वरूप "डेड हट्र्स" होता है।
2. **गन्ना शीर्ष प्ररोह भेधक (*सप्रोफैगा एक्सरप्टेलिस*)**: अंडे से बाहर आने के उपरांत इल्ली मध्य शिरा में प्रवेश करते हुए 24 से 48 घंटों में एक सुरंग बनाते है ।शुरू में कुछ लाल निशान छोड़कर पत्तियों की मध्य शिरा के भीतर सुरंग बनाते हुए भोजन करते हैं और पत्ती के केंद्रीय धुरी में प्रवेश करने के बाद में बढ़ते स्थल/बिंदु में प्रवेश करते हैं जिसके परिणामस्वरूप 'डेड हट्र्स' अर्थात पौधे की मृत्यु हो जाती है।
3. **रूट ग्रब (*जड़ कीटडिंभ*)**: कीटडिंभ/ग्रब भूमिगत होते हैं, प्रारम्भिक अवस्था में मिट्टी में मौजूद कार्बनिक पदार्थों पर तथा बाद में जड़ों को खाते हैं जिसके परिणामस्वरूप पौधे पीले होते हुए सूखते हैं और मुरझा जाते हैं।
4. **इंटरनोड भेधक (मध्य तना भेदक)**: इल्ली/सूँडी रोपाई के 3–4 महीने बाद कटाई के समय तक पौधों पर हमला करते रहते हैं। उभरे हुए लार्वा गाँठों के बीच के नाजुक भाग के पास बेंत में छेद करते हैं और आंतरिक ऊतक को खाते हैं। बाद में प्रवेश छेद को मल से भर देते हैं। सूंडियां गांठों के बीच के नाजुक

भाग के भीतर प्रवास करते हैं और इसे नुकसान पहुंचाते हैं। मध्य तना क्षेत्र में सुरंगनुमा छेद बनाते है। प्रभावित मध्य तना आकार मे पतला छोटा हो जाता है।

गन्ने की फसल में समेकित कीट प्रबंधन

1. खरपतवार तथा फसल के अपशिष्ट भागों को नियमित रूप से नष्ट करें।
2. कीट से क्षतिग्रस्त हुए पौधों को तोड़कर नष्ट कर दें ताकि उसके अंदर की किट की अवस्था भी नष्ट हो जाए।
3. फसल चक्र की विधि का उपयोग करें ताकि किट के जीवनचक्र को तोड़ा जा सके।
4. गर्मियों में गहरे जुताई की विधि अपनाएं।
5. ज्वार, मूंगबीन और ज्वार जैसे दूसरी फसलों से अतः खेती करें।
6. निगरानी हेतु 12/हेक्टेयर की दर से फेरोमॉन ट्रैप का प्रयोग करें।
7. क्राइसोपरला की प्रथम अवस्था के शिशु का 1000000/ हेक्टेयर की दर से उपयोग करें।
8. 2 ग्रा./ली. पानी में मिश्रित *बैसिलस थुरिंजयानसिस* का छिड़काव करें।
9. प्राकृतिक शत्रु जैसे ट्राईकोग्रामा, ब्रेकान ग्रीनी, ब्रेकान हेषेतर का बचाव करें।

सफाई व्यवस्था

- ❖ गन्ने लगाने से पहले खेत से पिछली फसल के पराली और मलबे को हटाने से दीमक और शल्क कीट प्रकोप कम किया जाता है।
- ❖ कपास में खरपतवार हटाने से तम्बाकू की सूँडी का प्रकोप कम हो जाता है।
- ❖ पत्ता लपेटक की आबादी को कम करने के लिए धान के खेतों और मेड़ों से घास वाले खरपतवारों को हटाना चाहिए। गन्ने में शल्क कीट के प्रबंधन से डिट्रैशिंग में मदद करता है ।

प्रमुख फसलों मे समेकित किट प्रबंधन के मानक

कीट प्रकोप के शुरुआती चरणों में कीटों की आबादी को अनुकूल सीमा के भीतर रखने के लिए कई निवारक तकनीकी और जैविक नियंत्रण नीतियाँ उपलब्ध हैं। यदि अन्य तकनीकी पर्याप्त रूप से प्रभावी नहीं होती हैं तो अंतिम उपाय के रूप में कम हानिकारक वाले कीटनाशकों का उपयोग किया जा सकता है। आई.पी.एम की प्रणाली में विभिन्न विधियाँ शामिल हैं जिनमें व्यवहारिक नियंत्रण, जैविक नियंत्रण, यांत्रिक नियंत्रण, संगरोध नियोजन, फसल प्रतिरोध, वनस्पति कीटनाशक और रासायनिक नियंत्रण शामिल हैं।

व्यवहारिक नियंत्रण

फसल प्रणाली या विशिष्ट फसल उत्पादन अभ्यास को समझकर व्यवहार नियंत्रण संशोधन में शामिल किया है, जिसका उद्देश्य कीट की आबादी मे बाधा उत्पन्न करना और अंततः फसल को नुकसान में कमी करना है।

व्यवहार नियंत्रण के प्रमुख कार्यात्मक तंत्र में शामिल हैः

- ❖ प्रतिकूल जैविक परिस्थितियों का निर्माण जिससे कीटों की आबादी के अस्तित्व को कम किया जाता है।
- ❖ फसल में इस तरह संशोधन करना कि कीट के प्रकोप से फसल को कम नुकसान हो।
- ❖ वातावरण में फेरबदल करके प्राकृतिक शत्रुओं की वृद्धि करना।
- ❖ उदाहरणः रोपण का समय; पौधों की विविधताः ट्रैप/ जाल, अवरोध और अंतर फसलें; जुताई; फसल स्वच्छता; उर्वरक के साथ–साथ जल प्रबंधन; कटाई का समय, फसल का चक्रिकरण; और खरपतवार का समुचित प्रबंधन।

आम तौर पर खरीफ में अपनाई जाती हुई व्यवहार नियंत्रण और कीटों पर इसके प्रभाव को निम्नलिखित तालिका में सूचीबद्ध किया गया हैः

क्र. सं.	फसल	प्रभाव
	रोपण का समय	
1.	कपास	मई के मध्य तक बुआई करने से गुलाबी सूँडी (पिंक बॉलवर्म), अमेरिकन सूँडी (बॉलवर्म) और सफेद मक्खी (व्हाइटफ्लाई) का प्रकोप कम होता है।
2.	ज्वार	समय पर (जून) बोई गई फसल में प्ररोह मक्खी का प्रकोप कम होता है और बसंत और देर से बोईगई फसल मे अत्यधिक प्रकोप होता है।
3.	गन्ना	जून–जुलाई, नवंबर–दिसंबर के दौरान बुआई करने से गन्ने के अंकुर छेदक कम हो जाते हैं।
	बीज दर और दूरी	
1.	फोडर (घास) ज्वार	प्ररोह मक्खी के कारण अंकुर मृत्यु दर की भरपाई करने के लिए 10 प्रतिशत अधिक बीज का उपयोग कर सकते हैं।
2.	धान	पौधे की दूरी कम होने से फुदका और पत्ता लपेटक की घटनाओं में वृद्धि होती है।
3.	कपास	दूरी कम रखने से सुंडी (बॉलवर्म) और जसिड का प्रकोप बढ़ जाता है।
4.	ज्वार	उच्च बीज दर (5 किग्रा/हैक्टेयर) का प्रयोग करके प्ररोह मक्खी और तना बेधक से पीड़ित हों तो प्रभावित पौधों को निकाल सकते है।
	जुताई	
1.	धान	धान के कटने के बाद गहरी जुताई करने से तना छेदक का प्रकोप कम होता है।
2.	कपास	कपास के बाद, गहरी जुताई करने से कपास की सूँडी (*हेलिकोवर्पा आर्मिगेरा*) कम हो जाती है।
3.	सूरजमुखी	सूरजमुखी की बुआई से पहले गहरी जुताई करने से कर्तनकीट/कटवर्म का प्रकोप कम हो जाता है।
4.	मूंगफली	मई–जून में गहरी जुताई करने से सफेद कीट भृंग जमीन से बाहर निकल जाते हैं। तत्पश्चात तेज गर्म धूप में मृत हो जाते हैं।
5.	गन्ना	पौधे के आधार पर मिट्टी लगाने से ऊबड़ खाबड़ छिद्र बंद हो जाते है जिससे युवा इल्ली को मारने में मदद मिलती है।
	पोषक तत्व प्रबंधन	
1.	उच्च (नत्रजन खाद का) जनसंख्या निर्माण के पक्ष में है पत्ता लपेटक, बीपीएच, डब्ल्यूबीपीएच, तना छेदक (चावल), कटवर्म (गेहूं) फुदका कीट(लीफहॉपर) (कपास)	
2.	उच्च का कीट विकास पर अवसाद प्रभाव पड़ता है : थ्रिप्स, पत्ता लपेटक (चावल) जासिड (भिंडी)।	
3.	गन्ने में सड़ी हुई गोबर खाद एफवाईएम का प्रयोग करने से दीमक के प्रकोप को कम करने में मदद करता है।	
	ट्रैप फसलें (फाँसू /पाश फसलें)	
1.	गोभी/कोल फसलों में डायमंडबैक शलभ/मोथ के लिए भारतीय सरसों।	
2.	मक्का और ज्वार में तना छेदक के लिए नेपियर घास और नेपियर बाजरा।	
3.	टमाटर में फल छेदक के लिए गेंदा के साथ बुआई करनी चाइए।	
4.	मक्का के चारों ओर सूडान घास लगाने से अपांटेल्स फ्लेविप्स द्वारा तना छेदक के परजीवीकरण को बढ़ाती है।	
5.	अंडे देने के लिए रोयेंदार इल्ली को आकर्षित करने के लिए लोबिया को 4:1 के अनुपात (मूंगफलीः लोबिया) में उगाएं।	
	अंतरफसल और फसल मिश्रण	
1.	राईग्रास–बरसीम मिश्रण से थायसैनोप्लुसिया ओरिचैलसिया और कपास की सूँडी (*हेलिकोवर्पा आर्मिगेरा*) की घटनाओं को कम करता है।	
2.	राया में मौजूद तारामीरा सरसों एफिड के प्रकोप को कम करता है।	

3.	मूंगफली को बाजरा और लोबिया के साथ 4:1 (मूंगफलीः बाजरा/लोबिया) के अनुपात में अंतरफसल से मूंगफली के पत्तों की खान की घटनाओं में कमी आती है।
4.	लोबिया के खेत के चारों ओर तिल की एक पंक्ति लगाने से रोयेंदार इल्ली द्वारा डिंबोत्सर्जन को आकर्षित करती है।
	फसल का चक्रीकरण
1.	मूँगफली के बाद धान को क्रम मे बदलकर उगाने से सफेद भृंग समाप्त हो जाता है।
	जल प्रबंधन
1.	फसल की तुलना में कीड़ों के लिए उचित समय पर आवश्यक मात्रा महत्वपूर्ण है। (उदाहरण के लिए खेतों से पानी की निकासी बीपीएच घटना को कम करती है)
2.	खेत की बार–बार सिंचाई करने से गन्ने में दीमक का प्रकोप कम हो जाता है।

यांत्रिक/भौतिक नियंत्रण

मुख्य रूप से यांत्रिक नियंत्रण में लोगों द्वारा विशेष उपकरणों का उपयोग करके कीट का विनाश किया जाता है। गन्ने में मार्च और मई के दौरान शीर्ष बेधक के अंडे का संग्रह करके नाश करना, रोयेंदार इल्ली, पत्ता लपेटक, तंबाकू की इल्ली, गोभी तितली, सफेद भृंग आदि को हाथ से इकट्ठा करना तथा बड़े पैमाने पर प्रकाश ट्रैप (जाल) का उपयोग करना शामिल है। रोयेंदार इल्ली को खत्म करने के लिए विभिन्न फसलों में प्रचलित पौधों को उखाड़ना, टिड्डियों के झुंड के लिए आग की लपटों का उपयोग करना और ड्रम बजाना शामिल है।

जैविक नियंत्रण

जैविक नियंत्रण या जैव नियंत्रण से तात्पर्य जीवों के जनसंख्या घनत्व या विशिष्ट कीट जीवों के प्रभाव को कम किया हैं। फसलों में कीटों के 30 से अधिक परभक्षी परिवार हैं इनमें से एंथोकोरिडे, नाबिडे, रेडुविइडे, जियोकोरिडे, कैरोबिडे, कोकिनेलिडे (लेडीबर्ड बीटल), निटिडुलिडे, स्टैफिलिनिडे, क्राइसोपिडे (लेसविंग्स), फॉर्मिसिडे, सेसीडोमायिडे और सिरफिडे आमतौर पर महत्वपूर्ण है ।

सबसे लोकप्रिय इस्तेमाल किया गया संवर्धित जैव नियंत्रण एजेंट ट्राइकोग्रामा लेपिडोप्टेरान अंडे का परजीवी है। लगभग 10 ट्राइकोग्रामा वर्तमान में मक्का, गन्ना, कपास, सब्जियों और अन्य फसलों के कीट के लिए बड़े पैमाने पर उपयोग किये जाते हैं।

अन्य जीवों की तरह, कीड़े भी बैक्टीरिया, वायरस, कवक, माइक्रोस्पोरिडिया, रिकेट्सिया और नेमाटोड के कारण होने वाली बीमारियों से पीड़ित होते हैं।अब तक सूक्ष्मजीवों की 3000 से अधिक प्रजातियों के बारे में बताया गया है कि वे कीड़ों में बीमारियों का कारण बनती हैं, लेकिन कई अनदेखे या अज्ञात हैं।

फसलों के कीटों का उचित प्रबंधन के लिए एक से अधिक तरीकों को प्रयोग में आना चाहिये ताकि हानिकारक कीट की संख्या भी कर रहें और पर्यावरण को हानि भी ना पहुंचे ।

खरीफ फसलों के खरपतवार एवं उनका प्रबंधन

रामेती जांगिड़'[1], कपिला शेखावत[2] एवं संजय सिंह राठौड.[2],
[1] कृषि अनुसंधान केंद्र, कृषि विश्वविद्यालय, मंडोर, जोधपुर
[2] सस्य विज्ञानं संभाग, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, नई दिल्ली–110012

कृषि के प्रारंभिक काल से ही उपयोगी फसलों के साथ साथ कुछ अनुपयोगी पौधे उग आते हैं ये पौधे फसलोत्पादन को तो कम करते ही हैं साथ ही साथ कृषि कार्यों में भी बाधा उत्पन्न करते हैं। ऐसे उगने वाले अवांक्षित पौधों को खरपतवार कहते हैं। भारत में विभिन्न कीट– पतंगों से कृषि उपज में कुल होने वाली वार्षिक हानि में, खरपतवारों का लगभग 37 प्रतिशत, कीटों का 29 प्रतिशत, रोगों का 22 प्रतिशत और अन्य पीड़कों का 12 प्रतिशत हिस्सा है। खरपतवार उत्पाद/भोजन, रेशा, तेल, चारा तथा पशु उत्पाद (मांस और दूध) की मात्रा और गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। विभिन्न शुष्क क्षेत्रों में खरपतवार प्रतियोगिता के कारण उपज में हानि को इस प्रकार पाया गया जैसे की बाजरा में 55% (बंगा तथा उनके सहयोगी, 2000), ग्वार में 53.7% (सक्सेना अनुराग तथा उनके सहयोगी, 2004), मक्के में 32.4–42.3% (शर्मा तथा उनके सहयोगी, 2000) मूंग में 65.4–79% (डूंगरवाल तथा उनके सहयोगी, 2003) सोयाबीन में 74% (छोकर, और बाल्यान, 1999) और मूंगफली में 15–75% (प्रिया तथा उनके सहयोगी, 2013). इसलिए, खरपतवार नमी, पोषक तत्व, प्रकाश और स्थान आदि के लिए प्रतिस्पर्धा करके पूरी फसल अवधि के दौरान फसल के लिए गंभीर खतरा पैदा करते हैं और फसल उत्पादन को कम कर देते हैं (राज सिंह तथा उनके सहयोगी, 2016)। खरपतवार प्रबंधन में हमेशा यह बात ध्यान में रखी जानी चाहिए कि हम फसल से खरपतवारों को पूर्णतया नष्ट नहीं कर सकते और न ही ऐसा करना पारिस्थितिकी की दृष्टि से लाभकारी होता है।

खरीफ फसलों के प्रमुख खरपतवार

खरीफ में उगाई जाने वाली फसलों में मुख्य रूप से तीन प्रकार के खरपतवार पाए जाते हैं।

घास वर्ग के खरपतवार

घास वर्ग खरपतवारों की पत्तियां पतली और लंबी होती हैं तथा इन पत्तियों के अंदर समानांतर धारियां पाई जाती है। ये एक बीजीय पौधे होते हैं, जैसे– छोटा सांवा (*इकाईनोक्लोवा कोलोनेम*) बड़ा सांवा (*इकाईनोक्लोवा क्रुसगली*), कोदों (*इल्युसिन इंडिका*), मकड़ा (*डैक्टाइलोक्टेनियम इजिप्टकम*), दूब (*साइनोडोन डैक्टाइलोन*), वनचरी (*सोरगम हैल्पैन्स*), जंगली लाल चावल (*ओराइजा सेटाइवा वैरायटी फतुआ*), गिनिया घास (*पानिकम डिकोटोमाईफलोरम*), क्रैबग्रास (*डिजिटेरिया सान्गुइनेलिस*), बनरी (*सेटारिया ग्लूका*), चिड़ियों का दाना (*ईरागरोस्टिस पिलोसा*) और झिरुआ (*फिमब्रिस्टाइलइस मिलिएसी*) आदि।

चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार

इस प्रकार के खरपतवारों की पत्तियां प्रायः चौड़ी होती हैं तथा ये आधिकतर द्विबीज पत्रीय पौधे होते हैं– जल भंगरा (*एक्लिप्टा एल्बा*), पुनर्णवा (*बोरहेविया डिफयुजा*), कंटीली चौलाई (*अमरेंथस स्पाईनोसम*), भांगद (*कैनाबिस सटाइव*), कनकवा (*कोमेलिना बैंगालेंसिस*), कोंदरा (*डाइजेरा आरवेंसिस*), हजार दाना (*फाईल्थैस निरुरी*), गाजर घास (*पार्थीनियम हिस्टोफोरस*), मकोय (*सोलेनम नाइग्रम*) साठी (*ट्रायन्थेमा पोर्टुलकास्ट्रम*), लहसुआ (*डाइजेरा मुराकाटा*), दूधी (*यूफोरबिया जेनिकुलाटा*), बड़ी दुधी (*युफोर्बिया हिरुटा*), चिरचिटा (*एकीरेन्थस आस्पेरा*), जंगल चौलाई (*अमेरैंथुस विरिडिस*), गोखरू (*ट्राईबुलस टेरेसट्रिस*), हूल हूल (*क्लियोम विस्कोसा*), और जंगली जूट (*कोरचौरस ओलीटोरस*) आदि।

नरकुल खरपतवार

इस समूह के खरपतवारों की पत्तियाँ लंबी तथा किनारे से मोटी होती हैं। जड़ों में गांठें पायी जाती हैं, जिससे नई फुटानें निकलती हैं जो कि नए पौधों को जन्म देने में सहायक

होती है जैसे मोथा घास (*साइप्रस इरिया, साइप्रस रोंट्ड्स, फिमब्रिस्टीलिस मिलीऐसा* (एल) वहल, फिमब्रिस्टीलिस टेनेरा/डिचोटोमा, एलोचारिस अट्रोपुरपुरी. आदि)।

फसल खरपतवार प्रतियोगिता की क्रांतिक अवधि

खरपतवार फसलों की पूरे जीवन काल अवधि में समान रूप से नुकसान नहीं पहुंचाते हैं। फसल वृद्धि चक्र में कुछ चरण ऐसे होते हैं जब खरपतवार फसल की वृद्धि और उपज के लिए अधिक हानिकारक होते हैं। आमतौर पर शुरुआती मौसम में खरपतवार प्रतियोगिता फसल के लिए सबसे हानिकारक होती है और इसलिए, शुरुआती मौसम में खरपतवार नियंत्रण अनिवार्य है। हालांकि फसल के विकास के बाद के चरणों में मौजूद खरपतवार उपज में हानि और अन्य असुविधाएं उत्पन्न करते हैं। अधिकतम उपज के लिए फसल–खरपतवार प्रतिस्पर्धा की क्रांतिक अवधि में फसल को खरपतवारों से मुक्त रखा जाना आवश्यक है। खरपतवार–फसल प्रतिस्पर्धा की क्रांतिक अवस्था से तात्पर्य फसल जीवन चक्र के उस समय से है जब खरपतवार नियंत्रण न करने से अधिकतम उपज में कमी हो जाती है। अधिकाँश फसलों में यह समयावधि बुवाई के लगभग 30–40 दिन तक रहती है। इस समय फसल को खरपतवार रहित रखना नितान्त आवश्यक है। एक "अंगूठे का नियम" यह है कि फसल बढ़वार की कुल अवधि की पहली एक–चौथाई से एक तिहाई अवधि को "खरपतवार प्रतियोगिता के लिए महत्वपूर्ण अवधि" के रूप में माना जा सकता है। खरीफ की प्रमुख फसलों में खरपतवार–फसल प्रतियोगिता का क्रांतिक समय अग्र सारणी में दिया गया है (तालिका 1)।

तालिका 1. फसलों में खरपतवार प्रतियोगिता की महत्वपूर्ण अवधि

क्र. न.	फसल का नाम	क्रांतिक अवधि (DAS)
1.	धान (अपलैंड) सीधी बुवाई	15–45 DAS*
2.	धान (तराई प्रतिरोपित)	30–60 DAT**
3.	धान (तराई सीधी–बीज वाली)	40–60 DAS
4.	मक्का	30–60 DAS
5.	ज्वार	15–45 DAS
6.	बाजरा	30–45 DAS
7.	सोयाबीन	पहले 60 दिन
8.	मूंगफली	42–56 DAS
9.	मूंग	15–30 DAS
10.	चना	15–30 DAS
11.	लोबिया	पहले 30 दिन
12.	कपास (बारिश पर आधारित)	20–60 DAS

* DAS बुवाई के कुछ दिन बाद

**DAT पौध रोपण के कुछ दिन बाद

खरपतवार प्रबंधन के तरीके

किसान खरपतवारों को अपनी फसलों में विभिन्न विधियों जैसे कर्षण, यांत्रिकी तथा रासायनिक विधि आदि का प्रयोग करके नियंत्रण कर सकते हैं। लेकिन पारम्परिक विधियों के द्वारा खरपतवारों का नियंत्रण करने पर लागत तथा समय अधिक लगता है। इसीलिए रसायनों के द्वारा खरपतवार जल्दी व प्रभावशाली ढंग से नियंत्रित किये जाते हैं और यह विधि आर्थिक दृष्टि से लाभकारी भी है। लेकिन शोध कार्यों द्वारा प्रमाणित कुछ अन्य सस्य क्रियाएँ भी खरपतवारों के प्रकोप को कम करने में लाभदायक पाई गई है।

निवारक तरीकेः

इसमें स्वच्छ खेती, स्वच्छ बीजों का उपयोग, बीज शैया को खरपतवारों से मुक्त रखना, अच्छी तरह से सड़ी हुई जैविक खाद का उपयोग करना, मेड़ों और सिंचाई नालों को खरपतवारों से मुक्त रखना, औजारों और कृषि मशीनरी को साफ रखना और प्रजनन अवस्था तक पहुंचने से पहले खरपतवारों का नियंत्रण शामिल है। इस में हम यह सुनिश्चित करते हैं की खरपतवार के बीजों को संभवतः नए खेत में प्रवेश नहीं करने दिया जाये। यह विधि खरपतवार के बीजों और वानस्पतिक प्रसारों की मात्रा को काफी कम कर देती है अन्यथा जो मिट्टी में जमा होते जाते हैं।

उपचारात्मक तरीकेः

यांत्रिक तरीकेः

इनमें हाथ से काटकर और हटाकर, जुताई करके अतिरिक्त जल भराव करके या सूखापन और खरपतवारों को जलाकर, मिट्टी का रोगाणुनाशन और मल्चिंग के माध्यम से खरपतवार का विनाश शामिल है। हाथ से निराई गुड़ाई करने से फसल के पौधों के राइजोस्फीयर के आसपास की मिट्टी ढीली हो जाती है जिससे फसल की वृद्धि और उपज में भी बढ़ोतरी होती है। हालांकि यह अत्याधिक

समय लेने वाली, श्रमसाध्य और अक्सर खरपतवार नियंत्रण की रासायनिक विधि की तुलना में महंगी होती है। हाथ से उखाड़ने का काम समय पर और फसल की वृद्धि के पहले किया जाना चाहिए। बिना जुती हुई मिट्टी में दबे हुए सुप्त बीज कई वर्षों तक अपनी अंकुरण क्षमता बनाये रखते हैं। हाथ से कुदाली चलाना एक महंगी विधि होने के साथ– साथ इसे उपयोगी भी माना जाता है क्योंकि यह खरपतवारों को हटाने के अलावा मिट्टी की भौतिक स्थिति में भी सुधार करता है। हाथ से कुदाली चलाना (पहली सिंचाई से पहले) खरपतवार के प्रकोप को कम करने में बहुत मददगार है, क्योंकि जो खरपतवार निराई से उखाड़े जा सकते हैं, वे फिर से खेत में नहीं उग पातें हैं।

शून्य भूपरिष्करण तकनीक और मल्चिंग

बार–बार जुताई करने से खरपतवार के बीजों को अंकुरित होने, वार्षिक खरपतवारों के प्रसार और स्थायीकरण को प्रोत्साहन मिलता है वहीँ दूसरी ओर बिना जुताई/शून्य जोत वाली परती भूमि अधिक बारहमासी खरपतवारों को प्रोत्साहित करती है। अवशेषों के साथ शून्य जुताई की विधि भूमि के वाष्पीकरण को कम करके मिट्टी की नमी को संरक्षित करने के साथ–साथ फसली और गैर–फसली स्थितियों में खरपतवारों की रोकथाम भी प्रभावी तरीके से करती है। इस तकनीक में खेत में केवल बुआई के लिए ही विशेष मशीन (जीरो टिलेज मशीन) द्वारा खाद तथा बीज को डाला जाता है। उससे पहले खेत में कोई क्रिया नहीं की जाती है। यह तकनीक मुख्य रूप से गेहूँ की फसल में अपनायी जाती है। मल्चिंग अधिकांश वार्षिक खरपतवारों और कुछ बारहमासी खरपतवारों जैसे कि दूब घास (सायनोडोन डैक्टाइलॉन) एवं बरु घास (सोरघम हेलेपेंस) के खिलाफ बहुत प्रभावी है।

मृदा सौरीकरण

इस तकनीक के अंतर्गत विभिन्न मोटाई की पारदर्शी पोलिईथाईलिन शीट (50–100 मिलीमाईक्रोन) को समतल नमीयुक्त मिट्टी की ऊपरी सतह पर फसल की बुवाई के पहले मई और जून के महीने में 4–6 सप्ताह तक फैलाकर मिट्टी की ऊपरी सतह का तापमान बाहरी तापमान की तुलना में 8–12°C ज्यादा किया जाता है। इससे मिट्टी की ऊपरी सतह में जमा खरपतवारों की बीजों के अंकुरण होने की शक्ति कम या निष्क्रिय हो जाती है। इसके आलावा कुछ हानिकारक कीड़े, सूत्रकृमि अन्य नाशक कीट भी नष्ट हो जाते हैं। यह तकनीक पौधशाला में पौध तैयार करते समय खरपतवारों को नियंत्रित करने में बहुत ही प्रभावशाली है।

शस्य क्रियाएं/पारिस्थितिक दृष्टिकोणः

फसल प्रजातियों का चुनाव, फसल की किस्में, रोपण घनत्व, फसल ज्यामिति, अंतर फसल, फसल रोटेशन, बुवाई का समय, फसल चक्र, उर्वरक और सिंचाई क्रियायों को उचित तरीके से अपनाकर खरपतवार प्रबंधन कर सकते हैं।

विभिन्न शस्य क्रियाएं इस प्रकार हैंः

फसल की प्रजातियां और खेतीः

आम तौर पर फसल विकास के शुरूआती समय में खरपतवार पौधों के साथ अधिक प्रतिस्पर्धा करते हैं, इसलिए फसल नियोजन इस तरह से किया जाना चाहिए कि यह फसल के पौधों की शुरुआती वृद्धि और शक्ति को बढ़ावा दे, जिसके परिणामस्वरूप खरपतवार के साथ बेहतर फसल प्रतिस्पर्धा हो। खेत की फसलों में खरपतवारों के प्रतिकूल प्रभाव को कम करने के लिए, लंबी अवधि की किस्मों का चयन करें क्योंकि ये किस्में जल्दी बढ़ती हैं और भूमि को जल्दी ही घेर लेती हैं जिसके परिणामस्वरूप छायांकन होता है और इस प्रकार खरपतवारों की वृद्धि को दबा दिया जाता है।

पौधों के बीच कम अंतरः

निकट दूरी (पंक्ति से पंक्ति) खरपतवारों के अंकुरण और वृद्धि को दबा देती है जिसके परिणामस्वरूप फसलों को खरपतवारों से मुक्त रखा जाता है।

फसल चक्रः

कुछ खरपतवार प्रजातियों या प्रजातियों के समूह के होने की संभावनाएँ अधिक होती हैं यदि वही फसल साल दर साल उगाई जाती है। उदाहरण के लिए, फसल चक्र प्रत्येक क्षेत्र में माइक्रॉक्लाइमेट को बदलकर खरपतवार की समस्याओं को कम कर देता है। फसल वृद्धि पैटर्न, शस्य क्रियाएं, खरपतवार नियंत्रण तकनीक, विभिन्न फसलों के लिए जुताई का प्रकार और तीव्रता फसल चक्र के अनुसार भिन्न होती है और यह भिन्नता फसल से जुड़े खरपतवारों के आगे प्रसार के लिए बाधा उत्पन्न करती

है। फसल चक्र परजीवी खरपतवारों जैसे कि रूखडी (स्ट्रिगा हरमॉन्टिका/एशियाटिका), आग्या (ओरोबैंकी रामोसा), अमरबेल (कुस्कुटा स्पीसीज) और चावल में छोटा सावां (इचिनोक्लोआ कोलोना), गेहूं में गुलीडंडा (फेलारिस माइनर) और जई (एवेना स्पीसीज) जैसे फसलों से जुड़े खरपतवारों के नियंत्रण के लिए अत्यधिक प्रभावी है। अल्फाल्फा/ल्यूसर्न यदि 2–3 वर्षों के लिए अनाज की फसलों द्वारा प्रतिस्थापित किया जाता है, तो कुछ हद तक कुस्कटा को नियंत्रित किया जा सकता है।

बुवाई का समयः

फसलों की बुवाई का समय खरपतवार प्रतियोगिता को प्रभावित करता है। यदि एक समय में अंकुरित होने वाले खरपतवारों के प्रारंभिक बड़े प्रवाह को बुवाई के सामान्य समय से थोड़ा पहले या बाद में फसल की बुवाई में हेरफेर करके रोक दिया जाये तो फसल लगभग खरपतवार मुक्त या कम खरपतवार की उपस्थिति में अंकुरित ही नहीं बल्कि अच्छे से प्रारंभिक वृद्धि कर लेती हैं। उदारण के लिए मक्का और कपास की सामान्य मानसून की बारिश के 15 दिन पहले सिंचाई के साथ बुआई करने से खरपतवार प्रतिस्पर्धा को कम करने के लिए फायदेमंद पायी गयी।

रासायनिक खरपतवार नियंत्रण

खरीफ की प्रमुख धान्य एवं दलहनी फसलों में खरपतवारनाशी रसायनों का प्रयोग करके भी खरपतवारों को नियंत्रित किया जा सकता है। जहां समय एवं श्रमिक कम तथा पारिश्रमिक ज्यादा हो वहां इस विधि को अपनाने से प्रति हेक्टेयर लागत कम आती है तथा समय की बचत होती है। रसायनों का प्रयोग अपनाने से श्रम शक्ति भी कम लगती है तथा मुख्य फसल को भी हानि नहीं पहुंचती। खरीफ की प्रमुख धान्य एवं दलहनी फसलों में उगने वाले खरपतवारों को नष्ट करने हेतु निराई गुड़ाई एवं खरपतवारनाशी रसायनों का उचित मात्रा व सही समय पर उपयोग हर फसल में अलग होता है। खरीफ मौसम की कुछ फसलों में प्रयोग किये जाने वाली शाकनाशी/रसायनों की विस्तृत जानकारी दी गई है (तालिका 2)।

तालिका 2. खरीफ फसलों में उपयोग किये जाने वाले शाकनाशी रसायन, छिड़काव का समय एवं मात्रा

क्र. स.	फसल का नाम	खरपतवार नियंत्रण
1.	रोपित धान	ब्युटाक्लोर 50 ईसी 1500 ग्राम/है. अथवा ऑक्जाडॉयरजिल 80 डब्ल्यू पी 100 ग्राम/है. अथवा एनिलोफ़ॉस 30 ईसी 400 ग्राम/है. सक्रिय तत्व रोपाई के 3 दिन के अन्दर तथा बिस्पाइरीबैक सोडियम 10 एस सी 25 ग्राम/हे. सक्रिय तत्व का रोपाई के 20–25 दिन बाद छिड़काव करें।
2.	सीधी बुवाई धान	प्रेटिलाक्लोर 50 ईसी 1000 ग्राम/हे. अथवा पेंडीमेथलिन 30 ईसी 1000 ग्राम/हे. बुवाई के तुरंत बाद या 2–3 दिन के अन्दर उचित नमीं की अवस्था में तथा बिस्पाइरीबैक सोडियम 10 एस सी 25 ग्राम/हे. सक्रिय तत्व का बुवाई के 15–20 दिन बाद छिड़काव करें।
3.	बाजरा	बुवाई के तुरन्त बाद प्रति हेक्टेयर आधा किलो एट्राजिन सक्रिय तत्व का 500–600 लीटर पानी में घोल बना कर छिड़काव करें। रूखडी के नियन्त्रण के लिये ढाई किलो 2, 4–डी सोडियम लवण 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर का छिड़काव बुवाई के 3–4 सप्ताह के बाद करें तथा इसी रसायन को सवा किलो प्रति हेक्टेयर की दर से 8–10 सप्ताह के अन्तराल पर दोहरायें। बुवाई के समय 20 किलो नत्रजन (अमोनियम सल्फेट के रूप में) प्रति हेक्टेयर देने पर रूखडी का प्रकोप कम करने एवं बाजरे की उपज बढ़ाने में लाभकारी है।
4.	मक्का	मक्का फसल में खरपतवार नष्ट करने के लिये बुवाई के तुरन्त बाद प्रति हेक्टेयर आधा–एक किलो एट्राजिन सक्रिय तत्व का 600–800 लीटर पानी में घोल बना कर छिड़काव करें।
5.	ज्वार	ज्वार फसल में खरपतवार नष्ट करने के लिये बुवाई के तुरन्त बाद प्रति हेक्टेयर 0.75 से 1 किलो एट्राजिन मात्रा का 600–800 लीटर पानी में घोल बना कर छिड़काव करें।
6.	ग्वार	फ्लूक्लोरेलिन (45 ई.सी.) दवा की एक लीटर सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर (2.2 लीटर दवा) की दर से 600–800 लीटर पानी में मिलाकर बुवाई के पूर्व छिड़काव कर भूमि में भली भांति मिला देना चाहिये अथवा पेन्डामिथेलीन (30 ई.सी) की 1 लीटर सक्रिय तत्व (3.3 लीटर दवा) को 600–800 लीटर पानी में मिलाकर बुवाई के तुरन्त बाद (बुवाई के 1–3 दिन के अंदर) परन्तु अंकुरण से पूर्व छिड़काव करना चाहिये।

7.	कपास	फ्लूक्लोरेलिन (1.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हैक्टर) का बुवाई से पहले सतही मिट्टी में मिलाकर अथवा पेंडिमेथालिन (1.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हैक्टर) या डाइयूरान (0.5 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हैक्टर) का बुवाई के बाद लेकिन फसल अंकुरण से पहले प्रयोग करके प्रभावी खरपतवार नियंत्रण किया जा सकता हैं। बूटाक्लोर 1.0 – 1.25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर बुवाई के 2–3 दिन के अन्दर प्रयोग करने से वार्षिक घास कुल व चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का नियंत्रण अच्छा होता हैं।
8.	मूंगफली, सोयाबीन एवं तिल	फ्लूक्लोरेलिन 1.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हैक्टर बुवाई से पूर्व मिट्टी में मिलाकर अथवा पेडिमेथालिन 1.0 कि. ग्रा. या एलाक्लोर 1.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हैक्टर का बुवाई के बाद लेकिन फसल के पौधे निकलने से पूर्व छिड़काव करके घास व चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का नियंत्रण किया जा सकता हैं। इमाजेथापर का बुवाई के 1–2 दिनों बाद 100 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हैक्टर छिड़काव करने से फसल खरपतवार रहित परिस्थितियों में अंकुरित होती हैं।
9.	अरहर, मूंग, मोठ, उड़द व लोबिया	फ्लूक्लोरेलिन 45 ई.सी. नामक शाकनाशी की 2.5 लीटर मात्रा को 600–700 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के पहले प्रति हैक्टर की दर से भूमि पर छिड़काव करके मिट्टी में मिला देना चाहिए अथवा बुवाई के बाद परंतु अंकुरण से पूर्व पेंडिमेथालिन या एलाक्लोर शाकनाशी के 750 ग्राम सक्रिय तत्व को प्रति हेक्टेयर की दर से 600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने पर सभी प्रकार खरपतवारों को नष्ट किया जा सकता हैं।

बुवाई के बाद किन्तु अंकुरण से पहले इमाजेथापर 100 ग्राम प्रति हैक्टर सक्रिय तत्व के प्रयोग से अधिकतर संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों पर अंकुरण से पहले प्रभावी नियंत्रण पाया जा सकता हैं।

शाकनाशियों के छिड़काव के समय रखी जाने वाली सावधानियां–

- शाकनाशी की अनुमोदित मात्रा का ही प्रयोग करना चाहिए।
- रेतीली जमीनों में रसायनों की कम और मध्यम से भारी जमीनों में अधिक मात्रा का प्रयोग करना चाहिए।
- कम मात्रा में प्रयोग से खरपतवारों पर कम प्रभावी तथा अधिक मात्रा होने पर फसल पर विपरीत प्रभाव पड़ने की संभावना रहती है।
- फसलों में प्रयोग हेतु अनुमोदित वर्णात्मक शाकनाशियों का ही प्रयोग करना चाहिए।
- बुवाई से पूर्व तथा खरपतवार बीज अंकुरण से पहले या बाद में प्रयोग किये जाने वाले शाकनाशी की क्रियाशीलता के लिए खेत में पर्याप्त नमीं होना चाहिए।
- छिड़काव करते समय यह ध्यान देना चाहिए कि शाकनाशीय घोल का समान रूप प्रक्षेत्र में वितरण हो जिससे सम्पूर्ण प्रक्षेत्र में खरपतवारों पर नियंत्रण हो सके।
- खरपतवारनाशी का प्रयोग करते समय फलेट फेन नोजल का प्रयोग करना चाहिए जिससे कम छींटें उछलते हैं और पास वाले खेत की फसल प्रभावित नहीं होती है।
- खरपतवारनाशी चक्र का अनुसरण करें ताकि खरपतवारों में प्रतिरोधी क्षमता विकसित ना हो।

खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए कई प्रभावी उपाय अपनाए जाते हैं। हाथ से निराई– गुड़ाई और अंतर–शस्य क्रियाएं हालांकि प्रभावी है, लेकिन खरपतवार फिर से उग आने की वजह से बार –बार क्रियाएं करनी पड़ती हैं जो न केवल कुछ समय के लिए महंगा होता है, बल्कि मिट्टी की भौतिक स्थितियों के कारण हमेशा संभव नहीं होता है। वृद्धि के प्रारंभिक चरण में खरपतवार का रासायनिक नियंत्रण प्रभावी और किफायती पाया गया है। हालांकि, अकेले शाकनाशी अपनी चयनात्मकता के कारण खरपतवारों पर पूर्ण नियंत्रण करने में असमर्थ हैं। इसके अलावा, अधिक मात्रा में अकेले शाकनाशी के निरंतर उपयोग ने अवशिष्ट विषाक्तता की समस्याओं को बढ़ा दिया। अतः इन सभी समस्यायों के समाधान के लिए समन्वित खरपतवार नियंत्रण अपनाना चाहिए जिसमें उपलब्ध खरपतवार नियंत्रण के सभी साधनों और विधियों का समन्वित तरीके से एक साथ उपयोग किया जाता है, जिससे न केवल उत्पादन लागत कम आती है बल्कि खरपतवार नियंत्रण भी प्रभावी ढंग व आसानी से किया जा सकता है।

धान के कीटों का समेकित कीट प्रबंधन

रजना एस., संजीव रंजन सिन्हा एवं रणधीर कुमार
कीट विज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली –110012

धान भारत ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व की मुख्य खाद्य फ़सलों में से एक है इससे चावल प्राप्त होता है। भारत का चावल उत्पादन में विश्व में दूसरा स्थान है और अधिकांश विश्व के देशों का मुख्य भोजन है। हरित क्रान्ति के पश्चात भारत में खाद्यान्न की आत्मनिर्भरता प्राप्त करने, धान की विश्व में मॉग तथा भविष्य में इसके निर्यात की अत्यधिक संभावनाओं को देखते हुए इसकी वैज्ञानिक खेती काफ़ी महत्वपूर्ण हो गयी है। किसी भी फसल के अधिक उत्पादन के साथ साथ अच्छी गुणवत्ता में फ़सल की किस्मों का अत्यधिक महत्व है। भारत में 2021–22 में धान का कुल उत्पादन 127.93 मिलियन टन था जो कि पिछले पाँच सालों के औसतन उत्पादन से 11.49 मिलियन टन अधिक था। सघन कृषि के कारण धान समेत कई फसलों में जैविक पीड़कों जैसे कीटों, रोगों एवं खरपतवार आदि समस्याओं उत्पन्न हुई है। पर्यावरण में धान को हानि पहुंचाने कीटों की सैकड़ों प्रजातियाँ हैं। इनमें से बहुत सी प्रजातियाँ नुकसान कम पहुंचाती हैं लेकिन कुछ प्रजातियाँ धान को गम्भीर रूप से हानि पहुंचाती हैं जिसमें पौध फुदका, तना छेदक, पत्ता लपेटक एवं गंधी बग आदि प्रमुख हैं। किसान अपने धान की फसल का औसतन 37 प्रतिशत कीटों तथा बीमारियों के कारण खो देते हैं जिससे करोड़ो रुपए का नुकसान होता है। अगर यह हानि किसी प्रकार से कुछ कम की जा सके तो धान के उत्पादन में काफी वृद्धि हो सकती है।

फसलों को कीटों के प्रकोप से बचाने में कीटनाशक काफी हद तक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। लेकिन इसके अंधाधुन्ध प्रयोग से खेतों के साथ–साथ हमारे पर्यावरण को काफी नुकसान पहुंचता है। इन सब समस्याओं के निदान के लिए समेकित कीट प्रबंधन (आईपीएम) पर काफी बल दिया जा रहा है जिसमें पर्यावरण के अनुरूप कीटों की समस्या को हल करना एक अच्छा उपाय है। समेकित कीट प्रबंधन में गंभीर रूप से क्षति पहुंचाने वाले कीटों के प्रकोप को नियंत्रण करने के लिए विभिन्न उपायों जैसे कि प्रतिरोधी किस्मों, सस्य क्रियाओं, यांत्रिक विधियाँ तथा जैविक विधियाँ आदि का प्रयोग सम्मलित है। फसलों में उपयोग के लिए कीटनाशक एक अंतिम उपाय होना चाहिए इसका उपयोग आवश्यकता के अनुसार करना चाहिए और इसके अनुचित उपयोग से बचना चाहिए कीटनाशक का उपयोग कीटों के लिए दिए गए आर्थिक दहलीज स्तर के अनुसार ही करना चाहिए। आर्थिक दहलीज स्तर पर कीटनाशकों के उपयोग से इसमें व्यर्थ व्यय से एवं पर्यावरण संबंधी समस्याओं से भी बचा जा सकता है।

प्रतिरोधी किस्में: भारत में 4000 से अधिक धान की किस्में उगाई जाती है जिसमें से कुछ प्रतिरोधी किस्में हैं जिन्हें लगाकर कीटों से तथा अन्य होने वाले रोगों से फसल को बचाया जा सकता है। इन फसलों को लगाने से क्षति कम होगी और उत्पादन में वृद्धि के साथ ही पर्यावरण में होने वाले नुकसान से भी बचा जा सकता है।

सस्य क्रियाएँ: कीट नियंत्रण में सस्य क्रियाएँ का नियमित रूप से खेत में संचालन करके कीटों को नष्ट किया जा सकता है और उससे होने वाले आर्थिक हानि से बचा जा सकता हैं। सस्यावर्तन, पौधों की उचित दूरी तथा समकालिक बुवाई आदि सस्य क्रियाएँ सुयोजित कीट प्रबंधन के लिए आवश्यक हैं।

यांत्रिक विधियाँ: भौतिक साधनों जैसे बाड़, अवरोधक तथा ट्रैप (पाश) आदि का उपयोग करके कीटों का प्रबंधन किया जाता है। पीले चिपचिपे पाश, प्रकाश पाश, अंडे के द्रव्यमान को हटाना आदि यांत्रिक कीट नियंत्रण विधियों के उदाहरण हैं।

जैविक विधियाँ: जैविक विधि में नाशीकीटों को नियंत्रित करने के लिए प्राकृतिक शत्रु जीवों–परभक्षियों और परजीवियों का उपयोग करते हैं। प्राकृतिक शत्रु जीव जो कि अपने भोजन के लिए कीटों को खाते हैं जिसमें मकड़ियों की विभिन्न प्रजातियाँ, ड्रैगन फ्लाई, डैमेल मक्खियाँ, लेडी बर्ड बीटल, क्राइसोपा प्रजाति, पक्षी आदि हैं। परजीव्याम (पैरासिटोइड) ऐसे जीव हैं जो दूसरे जीवों के शरीर में या उसके शरीर पर अंडे देते हैं, जिसके परिणामस्वरूप पैरासिटोइड का जीवन चक्र पीड़क के शरीर पर पूरा करते हैं।

समेकित कीट प्रबंधन में प्रारम्भ से ही कीटों की निगरानी करनी होती है इसके लिए विभिन्न तरीके को अपना सकते है –

1. कृषि पारिस्थितिक तंत्र विश्लेषण (एईएसए)

एईएसए एक दृष्टिकोण है, जिसका प्रसार कार्यकर्ताओं और किसानों द्वारा कीटों, रक्षकों, मिट्टी की स्थिति, पौधों के स्वास्थ्य, जलवायु कारकों के प्रभाव और स्वस्थ फसल उगाने के लिए उनके अंतर–संबंध में क्षेत्र की स्थितियों का विश्लेषण लाभकारी रूप से किया जा सकता है। क्षेत्र की स्थितियों के इस तरह के एक महत्वपूर्ण विश्लेषण से प्रबंधन करने और उचित निर्णय लेने में मदद मिलती है। पारिस्थितिकी तंत्र में जटिल अंतःक्रियाओं को समझना कीट प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इनके मूल घटक हैं:

- ❖ पौधों के विभिन्न चरणों में स्वास्थ्य देखना
- ❖ संयंत्रों की अंतर्निहित क्षतिपूर्ति क्षमताएँ
- ❖ कीट और प्राकृतिक शत्रु की जनसंख्या में गतिशीलता
- ❖ मिट्टी की स्थिति
- ❖ जलवायु कारक
- ❖ किसान का पिछला अनुभव

2. सर्वेक्षण/क्षेत्र का देख–भाल (स्काउटिंग)

रोविंग सर्वेक्षणों के माध्यम से स्थानिक क्षेत्रों में कीट और रोगों के प्रारंभिक विकास की निगरानी करना है। इसलिए, फसल के शुरुआती समय में स्थानिक क्षेत्रों के आधार पर सर्वेक्षण स्थान को रोविंग सर्वेक्षण करने के लिए चिन्हित किया जाना आवश्यक है। रोविंग सर्वेक्षणों के परिणामों के आधार पर, क्षेत्र में स्काउटिंग शुरू करने के लिए ब्लॉक के साथ ही किसानों को अधिक से अधिक प्रयासों पर ध्यान केंद्रित करना होगा। इसलिए, क्षेत्र स्काउटिंग के लिए किसानों को नीचे दिए गए अंतराल पर कीट और बीमारी की घटना का निरीक्षण करने के लिए जुटाया जाना चाहिए। पौध संरक्षण उपायों की आवश्यकता तभी होती है जब फील्ड स्काउटिंग के परिणामों के अनुसार कीट और रोग आर्थिक दहलीज स्तर (ईटीएल) को पार कर जाते हैं।

कीट प्रबंधन में स्काउटिंग और निगरानी महत्वपूर्ण कदम हैं जिससे प्रबंधकों द्वारा कीट के दबाव और फसल के हानि की संभावना को जांचा जा सकता हैं। स्काउटिंग प्रक्रिया में एकत्रित जानकारी का उपयोग यह निर्धारित करने के लिए किया जा सकता है कि क्या कीट नियंत्रण उपायों की आवश्यकता है, उपयुक्त नियंत्रण तकनीकों का चयन करें और उन्हें अधिकतम प्रभाव के लिए समय दें।

- ❖ प्रत्येक 10 किमी की दूरी पर 7–10 दिनों के अंतराल पर (कीटों की संख्या के आधार पर) रोविंग सर्वेक्षण करें। प्रतिदिन कम से कम 20 स्थान का अवलोकन करना चाहिए।
- ❖ किसानों द्वारा हर 3–5 दिनों में एक बार आर्थिक दहलीज स्तर (ईटीएल) के स्तर देखने के लिए कीटों के जैव नियंत्रण समूह की फील्ड स्काउटिंग की जानी चाहिए।

3. फेरोमोन/लाइट पाश आदि के माध्यम से कीटों की निगरानी करना

कुछ कीटों को विभिन्न प्रकार के पाश जैसे फेरोमोन, प्रकाश पाश की स्थिति की आवश्यकता होती है ताकि प्रारंभिक समय से कीटों की निगरानी की जा सके, इसलिए किसानों को रणनीति के अनुसार उचित स्थानों पर विभिन्न प्रकार के पाश का उपयोग करके निगरानी करनी चाहिए।

- ❖ **फेरोमोन ट्रैप (पाश):** पीले तना छेदक की निगरानी के लिए 5 पाश प्रति हेक्टेयर की दर से उपयोग किया जा सकता है।

❖ **प्रकाश ट्रैप (पाश)ः** कीटों के निरीक्षण करने के लिए चिनसुराह प्रकाश पाश या कोई अन्य प्रकाश पाश जिसमें 200 वाट का मरकरी लैंप हो उसको दो घंटे तक संचालित करके निगरानी किया जा सकता है।

❖ **स्वीप नेटः** दृश्य प्रेक्षणों के अतिरिक्त कीटों और जैव नियंत्रण एजेंट की संख्या का आंकलन स्वीप–नेट और भरे पानी के बर्तन का भी उपयोग करके भी किया जा सकता है।

धान फसल के प्रारम्भ से कटाई तक लगने वाले प्रमुख कीटों और उनका समेकित कीट प्रबंधन का विवरण दिया जा रहा है –

पौध फुदके

पौध फुदके दो प्रकार का होता है, भूरे पौध फुदके और सफेद पृष्ठ पौध फुदके। ये सम्पूर्ण भारत में धान के प्रमुख कीट हैं। भूरे पौध फुदके शिशु से व्यस्क तक भूरे होते हैं जबकि सफ़ेद पृष्ठ फुदके में सफेद रंग के धब्बे होते हैं। व्यस्क प्रकाश की तरफ आकर्षित होते हैं। यह दक्षिण तथा पश्चिमी राज्यों में यह कीट पूरे वर्ष पनपतें हैं जबकि उत्तरी राज्यों में ये केवल खरीफ की फसल में ही सक्रिय होते हैं। मादा पौध फुदका लीफशीथ (पर्णच्छ) पर अंडे देती हैं। भूरा फुदका लगभग 200–300 कि.मी. तक उड़ पाते है । फसल में सबसे पहले सफेद पृष्ठ पौध फुदका नजर आते हैं यह अगस्त से सितम्बर माह में सक्रिय रहता है जबकि भूरा फुदका सितम्बर से दिखाई देने लगता है तथा यह फसल पकने तक हानि पहुंचाता रहता है । वर्ष 2008 एवं 2013 में उत्तरी भारत में भूरा फुदके की जनसंख्या बढ़ने से भयंकर नुकसान हुआ था। मादा पौध फुदका लगभग 150 तक अंड़े देती है जिससे एक सप्ताह बाद शिशु निकलने लगते है। शिशु की 4–5 अवस्थाएँ होती हैं तथा एक पीढ़ी 18–25 दिन में पूरी हो जाती है।

पौध फुदके ज्यादातर पौधे के तने पर होते हैं किन्तु संख्या में वृद्धि होने पर यह पूरे पौध पर नजर आते हैं। शिशु एवं व्यस्क दोनों ही तने व लीफशीथ (पर्णच्छ) से रस चूसकर पौधे की वृद्धि पर दुष्प्रभाव डालते हैं। रस चूसने के पश्चात वे हानिकारक तत्वों को पौध में विस्थापित करते हैं जिससे पौधे पीले पड़ने लगते हैं इस तरह के लक्षणों को 'हॉपर बर्न' कहते हैं। अधिक प्रकोप से पौधा सुखकर गिरने लगता है और जैसे जैसे प्रकोप बढ़ता है खेत में सूखी फसल के गोलाकार क्षेत्र (हॉपर बर्न) जैसा प्रतीत होता हैं। पौध फुदके के कारण पौध के तने पर शहद सी बूंदें आ जाती हैं जिसे हनीड्यू (मधुरस) कहते है जो काली फफूंदी के विकास का कारण बन जाता है। प्रकोपित खेत के क्षेत्र से गुजरने पर कपड़ों पर काले चिपचिपे धब्बे आ जाते हैं। भूरा पौध फुदके और भी कई तरह के विषाणुजनित बीमारियाँ फैलाता है जिससे फसल के उत्पादन में लगभग 10–70 प्रतिशत तक नुकसान कर सकता है। इस कीट का आर्थिक दहलीज स्तर 10 फुदके प्रति पौधा है आर्थिक दहलीज स्तर से अभिप्राय है कि अगर एक पौध पर 10 या उससे अधिक फुदके पाए जाते है तो इनके प्रबंधन के उपाय करने चाहिए।

आर्थिक दहलीज स्तर :– 10 फुदके प्रति पौधा

प्रबंधन

❖ पौध फुदका से बचाव के लिए प्रतिरोधी प्रजातियाँ – मानसरोवर, सी ओ 42, आई ई टी 7575 तथा सफेद पृष्ठ पौध फुदका प्रतिरोधी – ए आर 133, आई सी 25687 आदि की बुआई करें।

❖ खेतों के मेढ़ों आस–पास के जगह में बची पौध एवं खरपतवारों को हटा दें।

❖ खेत से पानी पूरी तरह सूखने के बाद ही फिर सिंचाई करें।

❖ नत्रजन का उपयोग अधिक नहीं करना चाहिए।

❖ प्रकाश ट्रैप के प्रयोग से कीटों की संख्या की निगरानी करके उसके नियंत्रण के उपाय करने चाहिए।

❖ कीटनाशकों का उपयोग आर्थिक दहलीज स्तर के पार हो जाने पर करना चाहिए जिससे पर्यावरण तथा मित्र कीटों का संरक्षण हो सके।

❖ धान के मित्र कीट जैसे मकड़ी, मिरीड बग और काक्सिनेलिड्स आदि का संरक्षण करना चाहिए।

कीटनाशकों के अधिक प्रयोग से बचें। हमेशा उचित कीटनाशी के प्रयोग पर ही बल देना चाहिए ताकि पौध फुदके को नियंत्रित करने के साथ–साथ धान के मित्र

कीटों को भी संरक्षित किया जा सके । कुछ कीटनाशक जैसे बुप्रोफेजिन आदि पौध फुदके को तो नियंत्रित करते हैं पर मित्र कीटों के लिए हानिकारक नहीं होते । ऐसे ही कुछ पौधों के उत्पाद जैसे नीम व चाइनाबैरी पौध फुदके के लिए प्रभावकारी एन्टीफिडेंट सिद्ध हुए हैं तथा छिड़काव करते समय नोजल को पौधों के तनों की तरफ रखना चाहिए। सामान्यतः दानेदार कीटनाशी धान के मित्र कीटों के लिए सुरक्षित होते हैं।

पत्ता लपेटक

पत्ता लपेटक देश के लगभग सभी धान उगाए जाने वाले हिस्सों में व्यापक रूप से पाया जाता है। इस कीट के वयस्क पतंगे होते हैं जिनके पंख संतरी भूरे रंग के होते हैं तथा पंखों पर कई गहरी टेढ़ी मेढ़ी रेखाएँ होती हैं। मादा पत्तों पर एक–एक करके 300 तक अंडे देती हैं। सूंडियां अंडे से बाहर निकलने में 3–4 दिन का समय लेती हैं नई जन्मी सूँडी हरे सफेद रंग की होती है जबकि पूर्ण विकसित सूँडी हरे पीले रंग की होती हैं तथा इसका कोशावस्था ग्रसित पौधे के तने में होती है यह गहरे लाल रंग का होता है। इसका जीवन चक्र लगभग 24–29 दिनों में पूरा हो जाता है। सूँडी रेशमी धागे की सहायता से पत्ते के दोनों किनारों को मोड़ कर सुरंग बनाती है। उसमें रहकर वो पत्ते के हरे ऊतक को खाती है इससे पत्ते का प्रकोपित भाग सफेद दिखता हैं। अत्यधिक प्रकोप से फसल झुलसी हुई नजर आती है।

आर्थिक दहलीज स्तर – 4 प्रतिशत लिपटी पत्तियाँ ।

प्रबंधन

- ❖ नत्रजन खाद के अधिक उपयोग से बचे तथा खाद को संतुलित मात्रा में ही प्रयोग करें।
- ❖ खेतों तथा किनारों से खरपतवारों को हटाएँ।
- ❖ कीटों की संख्या पर निगरानी रखने के लिए प्रकाश ट्रैप का प्रयोग करें।
- ❖ अँड परभक्षी ट्राइकोग्रामा काइलोनिस का प्रयोग 1,00,000 – 1,50,000 प्रति हेक्टेयर की दर से करें।
- ❖ परभक्षी कीट जैसे रोव बीटल तथा मकड़ी आदि का संरक्षण करें।

तना छेदक

तना छेदक की 3 प्रजातियाँ होती हैं, पीली तना छेदक, गुलाबी तना छेदक और सफेद तना छेदक। ये तीनों ही धान की फसल को गंभीर रूप से नुकसान पहुंचाते हैं। गुलाबी तना छेदक बहुफसलभक्षी है यह धान और गेहूं के फसल चक्र में इसका प्रकोप बहुत ज्यादा हो गया है। पीला तना छेदक ही धान का महत्वपूर्ण और विशिष्ट कीट है यह धान को ज्यादा हानि पहुंचता है। पीला तना छेदक उत्तरी भारत में ज्यादातर अप्रैल से अक्टूबर तक तथा दक्षिणी भारत में यह वर्ष भर सक्रिय रहता है। पीला तना छेदक की मादा के पंख पीले रंग के होते हैं जिनके बीचों बीच गहरे काले रंग का धब्बा होता है जबकि नर के पंखों पर कई छोटे–छोटे भूरे रंग के धब्बे होते हैं। सूँडी कुछ हल्के पीले रंग की होती है जिसका सिर संतरी रंग का होता है। कोशावस्था ग्रसित पौधे के तने में होती हैं। गुलाबी तना छेदक की सूँडी गुलाबी होती है जबकि सफेद तना छेदक की सूँडी सफेद रंग की होती है। पीला तना छेदक की मादा पत्तों की चोटियों पर झुण्ड में 100–200 तक अंडे देती है जो भूरे पीले बालों से ढके होते हैं अंडों से 5–8 दिनों में सूंडियां बाहर आ जाती हैं, सूंडियां 16–27 दिनों में 6 अवस्थाएं पूरा करती हैं। इसका लगभग 31–40 दिनों में जीवनचक्र पूरा हो जाता है।

इन कीटों के व्यस्क शलभ होते हैं और केवल सूँडी ही फसल को नुकसान पहुंचाती हैं। सूँडी तने में छेद करके तने में घुस जाती है और इसे काट देती हैं। फसल के फुटाव की अवस्था में इसके प्रकोप के लक्षण को "मृत–केन्द्र" (डेडहार्ट) व बाली आने के उपरान्त इनके लक्षणों को "सफेद बाली" (व्हाइटहैड) के नाम से जाना जाता है।

आर्थिक दहलीज स्तर – 5 प्रतिशत "डेडहार्ट" या 2 प्रतिशत सफेद बाली।

प्रबंधन

- ❖ रोपाई से पहले पौधों की ऊपरी चोटी को काट के हटा दें।
- ❖ नत्रजन का अधिक उपयोग न करें एवं संतुलित खाद का प्रयोग करें।

- ❖ खेतों से मृत सफेद बालियों को चुनकर निकाल लें व उनको अच्छी तरह नष्ट कर दें।
- ❖ फेरोमोन ट्रैप स्कप्रोंल्यूर का प्रयोग पीले तने छेदक की संख्या पर निगरानी के लिए करें।
- ❖ रोपाई के 30 दिन के बाद *ट्राइकोग्रामा जैपोनिकम* 1,00,000–1,50,000 प्रति हेक्टेयर की दर से 2 – 6 सप्ताह तक छोड़ें।
- ❖ पौधों की कटाई जमीन स्तर तक करें और फसल के ठुंठो को नष्ट कर दें जिससे कीट की सूंडियां नष्ट हो जाए।

गॉलमिज

भारत के धान उगाए जाने वाले दक्षिण और पश्चिम क्षेत्रों के हिस्सों में गॉलमिज अत्यधिक मात्रा में पाया जाता है। गॉलमिज का व्यस्क मच्छर की तरह लम्बी टांगों वाला होता है। मादा का पेट लाल रंग का तथा नर का पेट गहरे लाल रंग का होता है। मादा पत्ती के किनारों पर एक–एक करके 200 से 300 तक अंडे देती है। 3 से 4 दिन बाद अंडों से सूंडियां निकल जाता हैं, तथा 15–20 दिन में प्युपा बन जाता है। प्यूपा से लगभग 2–8 दिनों में वयस्क निकल आते हैं। गॉलमिज का जीवन चक्र लगभग 30–35 दिनों में पूरा हो जाता है।

गॉलमिज का प्रकोप नर्सरी से शुरू हो जाता है और धान के अधिकतम फुटाव की अवस्था तक रहता हैं। अंडों से निकलने के बाद मैगटस् (शिशु) तने में घुसकर मुख्य शाखा के ऊपरी हिस्से में पहुँच कर इसको खा जाते हैं। ग्रसित कल्लों की बीचोबीच की पत्तियाँ कुछ चमकदार होकर नलीनुमा हो जाती है जिसे "सिल्वर सूट" कहते है जिससे पौधे पर बालियाँ आती है।

आर्थिक दहलीज स्तर – 5 प्रतिशत सिल्वर शूट।

प्रबंधन

- ❖ प्रतिरोधक प्रजातियाँ जैसे आईआर 36, ककाटिया, धनियालक्ष्मी, सुरेखा, फाल्गुना, कुंती, शक्ति, आशा, शामली, सुरक्षा, अभय और राजेंद्र धान का प्रयोग करना चाहिए।
- ❖ कीटों का प्रकोप रोकने के लिए पौध जल्दी लगाएँ।
- ❖ खेतों से सिल्वर शूट को चुनकर अच्छे से नष्ट कर दे।
- ❖ नत्रजन का अधिक उपयोग से बचें।
- ❖ खेतों तथा आस–पास के जगह से खरपतवारों को नष्ट करें।
- ❖ परभक्षी प्लेटिगस्टर ओराइजा का संरक्षण करें।
- ❖ पौध लगाते समय पौध की जड़ों को क्लोरपायरोफॉस 20 ई सी 2.0 मिली./ली. पानी के प्रतिशत मिश्रण में एक मिनट तक डुबाएँ।

हिस्पा

भारत के कुछ हिस्सों में हिस्पा एक अत्यधिक हानिकारक कीट है। अधिक उत्पादन वाली प्रजातियाँ तथा उनसे जुड़ी सस्य क्रियाओं ने इसके प्रकोप को काफी बढ़ावा दिया है। इसके वयस्क भृंग नीले काले रंग के होते हैं तथा इनके शरीर पर छोटे–छोटे तीखे बाल होते हैं। ग्रब (शिशु) चलने में असमर्थ होते हैं तथा पत्ती पर सफेद सुरंग में रहते हैं। मादा पत्तियों की चोटियों पर लगभग 55 की संख्या में अंडे देती है। 3 से 5 दिनों के बाद अंडों से सूंडियां बाहर निकल आती हैं। लगभग 14 दिनों के बाद सूंडियों से प्यूपा व 4 से 5 दिनों के बाद प्यूपा से व्यस्क बाहर आ जाते हैं।

वयस्क तथा अभ्रक दोनों ही फसल को नुकसान पहुंचाते है। व्यस्क भृंग पत्तियों के हरे भाग को खाकर सीढ़ीनुमा सफेद लकीरें बना देती है जबकि निम्फ़ हरे पदार्थ को खाकर पत्तियों में सुरंग बना देता है। हानि नर्सरी से शुरू होकर खेत में फैलता है।

आर्थिक दहलीज स्तर – 2 क्षतिग्रस्त पत्तियाँ प्रति पौधा या 2 वयस्क प्रति पौधा।

प्रबंधन

- ❖ पौधे की चोटियों को रोपाई से पहले काट के हटा दें।
- ❖ खेतों तथा मेढ़ से खरपतवारों को नष्ट करें।
- ❖ खेत से नीले काले भृंगों को चुनकर नष्ट कर दें।
- ❖ खेत में पानी हमेशा भरा न रखें तथा सिंचाई कुछ अंतराल पर ही करें।

गंधीबग

गंधीबग या स्टिंक बग भारत के कुछ हिस्सों में धान में लगने वाले प्रमुख कीट है। इस कीट के कारण खेतों में दुर्गन्ध फैलती है इसलिए इसे गंधीबग कहते हैं। व्यस्क बग पतले तथा पीले हरे रंग के होते हैं। शुरुआत में शिशु हरे रंग के होते हैं पर बाद में भूरे रंग के हो जाते हैं। धूप के समय यह कीट पौध के छाया वाले हिस्से पर रहते हैं। मादा पत्ती पर एक रेखा में अंडे देती है। अंडे गोल तथा भूरे रंग के होते हैं। 6 से 7 दिनों में शिशु अंडों से बाहर निकल आते हैं। 2 से 3 सप्ताह बाद शिशु से व्यस्क बन जाते हैं। इसका जीवनचक्र 33 से 35 दिनों तक का होता है।

व्यस्क तथा शिशु दोनों ही दूधिया अवस्था में दानों से रस चूसकर उनको खोखला बना देते हैं। ग्रसित पौधे पर काली फफूंदी के काले या भूरे धब्बे दिखाई देते हैं। जल्दी पकने वाली प्रजातियों की तुलना में देर से पकने वाली प्रजातियाँ इसका ज्यादा शिकार होती हैं। धान के अतिरिक्त यह बग इकाइनोक्लिया नामक खरपतवार पर भी विकास करती हैं। इस कीट के अधिक आक्रमण से लगभग 50 प्रतिशत तक नुकसान हो सकता है।

आर्थिक दहलीज स्तर – 1 बग प्रति पौधा।

प्रबंधन

- ❖ नत्रजन खाद के अधिक उपयोग से बचें और केवल संतुलित खाद ही प्रयोग करें।
- ❖ एक क्षेत्र के खेतों में बुआई तथा रोपाई एक ही समय पर करें।
- ❖ खेत तथा किनारों से इकाइनोक्लिया खरपतवार को चुनकर नष्ट करें।
- ❖ प्रकाश ट्रैप के प्रयोग से कीटों को पकड़ कर नष्ट कर दें।

व्होर्ल मैगट (*हाइड्रेला सासाकि*)

मैगट भँवर के अंदर के कोमल ऊतकों को खाते हैं और छेद के साथ पीले सफेद अनुदैर्ध्य सीमांत धब्बे बनते हैं। मुरझाए हुए पौधे की पत्तियाँ रुक जाती हैं, परिपक्वता में देरी होती है और साथ ही सिरे के पास की नई पत्तियां गिर जाती हैं।

आर्थिक दहलीज स्तर (ई टी एल) – 25% क्षतिग्रस्त पत्तियाँ

प्रबंधन :

- ❖ खरपतवार और अन्य पौध को हटा दें ।
- ❖ फसल की जल्दी बुआई करें ।
- ❖ पोटाश उर्वरक का अनुकूलतम उपयोग करें ।

सैनिक कीट

सैनिक कीट धान का अनियमित कीट हैं। यह भारत के कुछ हिस्सों में बहुत बार यह कीट अधिक संख्या में पाया गया हैं। वयस्क मझोल कद का, तगड़ा स्लेटी–भूरे रंग का शलभ होता है जिसके अगले पंखों पर काले चकते होते हैं। पीछे वाले पंख सफेद–भूरे होते हैं। अंडे पौधे पर झुंड में स्लेटी रंग के बालों से ढके होते हैं। सूंडियां जब अंडों से बाहर निकलती हैं तो हरे रंग की होती हैं। सूँडी नर्सरी तथा खेत दोनों में ही फसल को नुकसान पहुंचाती हैं। रोपाई की गई फसल में यह कीट पत्तियों के बीच की शिराओं को छोड़ते हुए पूरी पत्तियों को चट कर नष्ट कर देता हैं। फसल को देखकर लगता है जैसा कोई जानवर फसल चर गया हो। सूंडियां झुण्ड में एक खेत से दूसरे खेत में जाती है इसलिए इसे झुण्ड वाली सूँडी भी कहते है।

आर्थिक दहलीज स्तर – 1 सूँडी प्रति पौधा।

प्रबंधन

- ❖ खरीफ के फसल लगाने से पहले खेतों की गहरी जुताई करें।
- ❖ नत्रजन खाद के अधिक उपयोग से बचें और केवल संतुलित खाद का ही उचित मात्रा में प्रयोग करें।
- ❖ बची हुई नर्सरी तथा खरपतवारों को अच्छे से नष्ट कर दें।
- ❖ खेत में पानी हमेशा भरा न रखें तथा सिंचाई कुछ अंतराल पर ही करें।
- ❖ प्रकाश ट्रैप के प्रयोग से कीटों को पकड़कर नष्ट कर दें।

उपरलिखित प्रबंधन के अलावा धान को क्षति पहुँचाने वाले कीटों के प्रबंधन/नियंत्रण के लिए आवश्यकता पड़ने पर निम्नलिखित कीटनाशकों का भी प्रयोग किया जा सकता है –

कीटनाशक	कीट	मात्रा
एज़ाडाइरेकटिन 0.15% ईसी (नीम बीज गिरी आधारित)	तना छेदक	3 मिली/ली.
बेसिलस थुरिंजिएनसिस कुर्सटेकी सीरोटाइप एच–39, 3बी, स्ट्रेन जेड–52		500–750 ग्रा/है.
कार्टेप हाइड्रोक्लोराइड 4% जीआर		18.75 किग्रा/है.
कार्टेप हाइड्रोक्लोराइड 50% एस पी		2 ग्रा/ली.
क्लोरेंट्रानिलिप्रोल 18.5% एससी		0.3 मिली/ली.
क्लोरेंट्रानिलिप्रोल 0.4% जीआर		10 किग्रा/है.
फिप्रोनिल 5% एससी		1.5–2 मिली/ली.
फिप्रोनिल 0.3% जीआर		17–25 किग्रा/है.
फ्लुबेंडाईमाइड 20% डब्ल्यूजी		0.25 ग्रा/ली.
फ्लुबेंडाईमाइड 39.35% एससी		0.1 मिली/ली.
थायोसाइक्लम हाइड्रोजन ऑक्सालेट		2 मिली/ली.
क्लोरेंट्रानिलिप्रोल 0.5%+ थायामेथोक्सम 1% जीआर		6 किग्रा/है.
बेसिलस थुरिंजिएनसिस कुर्सटेकी, सीरोटाइप एच–39, 3बी, स्ट्रेन जेड–52	पत्ता लपेटक	500–750 ग्रा/है.
बिवेरिया बेसियाना 1.15% डब्ल्यूपी		2.50 किग्रा/है.
कार्टेप हाइड्रोक्लोराइड 4% जीआर		19–25 किग्रा/है.
कार्टेप हाइड्रोक्लोराइड 50% एसपी		2 ग्रा/ली.
क्लोरेंट्रानिलिप्रोल 18.5% एससी		0.3 मिली/ली.
क्लोरेंट्रानिलिप्रोल 0.4% जीआर		10 किग्रा/है.
क्रोमाफेनोज़ाइड 80% डब्ल्यूपी		0.2–0.25 ग्रा/ली.
फिप्रोनिल 0.6% जीआर		0.15 ग्रा/ली.
फ़्लूबेंडाईमाइड 39.35% एससी		0.1–0.13 मिली/ली.
थायोसाइक्लम हाइड्रोजन ऑक्सालेट		2 मिली/ली.
एसिटामिप्रिड 20% एसपी	पौध फुदका	1–1.6 ग्रा/ली.
एज़ाडाइरेकटिन 0.15% ईसी (नीम बीज गिरी आधारित)		3–5 मिली/ली.
फिप्रोनिल 5% एससी		2–3 मिली/ली.
फ्लोनिकैमिड 50% डब्ल्यूजी		0.3 ग्रा/ली.
डाइफेनथ्यूरोन 20% एसजी		0.3–0.4 ग्रा/ली.
इमिडाक्लोप्रिड 30.5% एससी		0.12 मिली/ली.
इमिडाक्लोप्रिड 17.8% एसएल		0.2 मिली/ली.
थायामेथोक्सम 25% डब्ल्यूजी		0.13–0.2 ग्रा/ली.
एथिप्रोल 40+इमिडाक्लोप्रिड 40% डब्ल्यूजी		0.3 ग्रा/ली.
इमिडाक्लोप्रिड 06%+लैम्ब्डा–साइहेलोथ्रिन 04% एसएल	गंधी बग	2 मिली/ली.
क्लोरपाइरीफॉस 20 ईसी	सैनिक कीट	2.5 मिली/ली.
क्विनालफोस 25% ईसी	हिस्पा	2–4 मिली/ली.

कार्बोरन 3% जी		25 किग्रा/है.
क्लोरपाइरीफॉस 20% ईसी		1.25–2.5 मिली/ली.
मैलाथियान 50% ईसी		1.2–2.3 मिली/ली.
क्विनालफोस 25% जेल		1–2 मिली/ली.
इमिडाक्लोप्रिड 6%+लैम्डा साइहेलोथ्रिन 4% एसएल		0.6 मिली/ली.
क्लोरपाइरीफोस 20% ईसी	व्होर्ल मैगट	3 मिली/ली.
फिप्रोनिल 05% एससी		2 मिली/ली.
फिप्रोनिल 0.3% जीआर		17–25 किग्रा/है.
कार्टैप हाइड्रोक्लोराइड 04% जी		18.5–25 किग्रा/है.
कार्बोसल्फान 06% जी	गॉलमिज	16.7 किग्रा/है.
क्लोरपाइरीफॉस 10% जी		10 किग्रा/है.
क्लोरपाइरीफोस 20% ईसी		3 मिली/ली.
फिप्रोनिल 5% एससी		2 मिली/ली.
फिप्रोनिल 0.3% जीआर		17–25 किग्रा/है.
थायामेथोक्सम 25% डब्ल्यूजी		0.2 ग्रा/ली.

आधुनिक विश्व में लोग नई कृषि तकनीक तथा वैज्ञानिक तरीके से खेती करने पर बल देते हैं जिससे हमारे पर्यावरण, भूमि और जल स्रोतों के होने वाले नुकसान को हम कम कर सकते हैं। समेकित कीट प्रबंधन भी इसकी एक उपयुक्त तकनीक है जिसका उपयोग करके हम कृषि के कीटों का सुचारु रूप से प्रबंधन कर सकते हैं तथा उससे पर्यावरण में होने वाले भारी नुकसान से भी बच सकते हैं। लेकिन रासायनिक कीटनाशकों का ज्ञान कम होने तथा जल्दी परिणाम प्राप्त करने के लिए लोग इनका अंधाधुंध उपयोग करते हैं जिससे हमारे खेतों की उपजाऊ क्षमता कम हो जाती है, वातावरण प्रदूषित हो जाता है और कीटों के प्राकृतिक शत्रु की संख्या भी कम हो जाती हैं। इसलिए हमें अपने फसलों को बचाने तथा उत्पादन को बढ़ाने के लिए वैज्ञानिक कृषि तकनीक पर विशेष बल देना होगा और साथ ही रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग अत्यधिक आवश्यक होने पर ही करना होगा ताकि पर्यावरण सुरक्षित रह सके।

नर्सरी (पौधशाला) में सूत्रकृमि की समस्या और प्रबंधन

पंकज, हरेंद्र कुमार, अभिषेक गौड़ा एवं सोनी
सूत्रकृमि विज्ञान संभाग,
भा.कृ.अ.प.–भा.कृ.अनु.सं., नई दिल्ली–110012

पादप परजीवी सूत्रकृमि एक प्रमुख रोग पैदा करने वाले जीवों में से एक है जो भारत के सभी प्रमुख फसल पौधों को संक्रमित करता है। निमेटोड छोटे सूक्ष्म जीव होते हैं जो फसल के पौधों पर विभिन्न प्रकार के लक्षण पैदा करते हैं। रूट नॉट नेमोटोड, *मेलोइडोगाइन एसपीपी*। आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण सूत्रकृमि प्रजातियों में से एक है जो खुली खेती या संरक्षित खेती प्रणाली में उगाए गए फलों और अन्य फसलों को नुकसान पहुंचाती है।

पादप परजीव सूत्रकृमि (निमेटोड) धागे की तरह मिट्टी में रहने वाले प्राणी हैं। जो फसलों की जड़ों पर परजीवी के रूप में रहकर पौधों के भोजन पर ही अपना जीवन निर्वाह करते हैं। बहुसंख्यी कोशिका वाले प्राणी जगत में सूत्रकृमि सर्वाधिक संख्या में पाये जाते हैं। यदि हम प्राकृतिक पर्यावरण के आधार को देखें। खेती करने योग्य मिट्टी के करीब 1.2 x 1010 कृमि प्रति हेक्टेयर में उपलब्ध हो सकते हैं । स्वतंत्र रूप से निर्वाह करने वाले कृमि सड़े कार्बनिक खाद पर विकसित रहते हुए पर्यावरण परिपेक्ष में हो रहे कार्य/सेवाओं में निरंतर योगदान प्रदान कर पर्यावरण का संतुलन बनाये रखने में सहायक है।

नर्सरी सूत्रकृमि संक्रमण के प्रसार के केंद्र बिंदु हैं। रोपण सामग्री के माध्यम से फैले नेमाटोड स्पष्ट रूप से खेत से खेत, गांव से दूसरे गांव आदि में स्पष्ट हो गए हैं । नतीजतन, फसल के पौधों की खराब प्रारंभिक स्थापना और इसके आगे वृद्धि, उपज में गिरावट, और यहां तक कि परिपक्व पौधों की मृत्यु भी हो सकती है। पौधे आमतौर पर जमीन के ऊपर कोई लक्षण नहीं दिखाते हैं और संभवतः नेमाटोड सवंमित जड़ों को ले जाते हैं। फूलों की फसलें, और फलों के पेड़ सभी नर्सरी में पैदा होते हैं, अधिकांश का उत्पादन कंटेनरों में, ग्राउंड बेड या खेतों में, या दोनों बढ़ते स्थलों के संयोजन से किया जा सकता है। नर्सरी फसलों के लिए सूत्रकृमि प्रबंधन के अधिकांश सिद्धांत सभी आभूषणो पर समान रूप से लागू होते हैं। पौध रोपण सामग्री में सूत्रकृमि संक्रमण के बारे में पौधशाला, उत्पादकों और बागवानी क्षेत्र के कर्मचारियों के बीच अनभिज्ञता के कारण सूत्रकृमि पूरे भारत में फैल गए हैं। हाल ही में, यह समस्या देश भर में अमरूद के बागानों और एक संदिग्ध विदेशी प्रजाति में बड़े पैमाने पर सामने आई है, *मेलोइडोगाइन एंटरोलोबि* (अमरूद की जड़–गांठ सूत्रकृमि) 11 राज्यों में पाए गए हैं।

परजीव कृमि भोजन करने वाली क्रिया के आधार पर कई प्रकार की विविधता दर्शातें हैं – इनमें जमीन के भीतर रहने वालों व पौधे के ऊपरी भाग जैसे पत्ती एंव फूल के परजीव है जिससे ये बहुफसली परजीव बनकर अपने आपको विभिन्न वातावरण में अनुकूलता प्रदान करते हैं। सूत्रकृमि द्वारा पौधों की ऊपरी सतह में क्षति के उपरान्त पौधों के कुछ पदार्थों का रिसाव होता है जो कि वहां रह रहे जीवों को प्रभावित करने की क्षमता रखता है। सूत्रकृमि के ऊपरी भाग में एक सूई जैसा तंत्र होता है जिसे वह जड़ों की कोशिकाओं को अन्दर तक भेदकर अपना खाद्य पदार्थ को लेता है। जिससे जड़ों में घाव द्वारा क्षति पहुंचती है। जब जड़ों में इस प्रकार की क्षति होती है तब अन्य सूक्ष्म जीव को जड़ों के तल में प्रवेश करने का अवसर मिलता है जो कि अन्यथा मिट्टी में ही रह जाते हैं न्यूनतम संख्या में सूत्रकृमि न कि सूक्ष्म जीवों को जड़ों में प्रवेश के लिए सहायक है अपितु यह पौधों के रक्षा तंत्र व प्रतिरोघक क्षमता को भी प्रभावित करता है। चूंकि सूत्रकृमि पर्यावरण में विभिन्न भूमिका निभा रहे हैं जिसके कारण यह एक महत्वपूर्ण प्राणी समझा जा सकता है।

नर्सरी पौधों को बड़ा नुकसान पहुंचाने वाले महत्वपूर्ण सूत्रकृमि

- जड़–गांठ (*मेलोइडोगाइन* एसपीपी) ।
- घाव (*प्राटिलेंकस* एसपीपी) ।
- पर्ण (*एफेलेनक्वाएड्स* एसपीपी) ।
- स्टंट (*टाइलेंकोरिंकस* एसपीपी) सूत्रकृमि ।

रोग के लक्षण :

सूत्रकृमि के हमले के विशिष्ट जड़ लक्षण हैं: जड़ गांठें या जड़ के गलफड़े, जड़ घाव, अत्यधिक जड़ शाखाएं, क्षतिग्रस्त जड़ युक्तियां, ठिठुरन या संक्षिप्त जड़ प्रणाली, और जड़ों, बल्बों और प्रकंदों का सड़ना।

जमीन के ऊपर : प्रभावित पौधे अक्सर धीमी गिरावट और पर्ण पीलेपन (क्लोरोसिस) का प्रदर्शन करते हैं, जहां पर्ण सूत्रकृमि शामिल होते हैं, वहां पत्तियां रूखी हो सकती हैं और उनमें काले धब्बे या मृत धब्बे हो सकते हैं । पर्णसमूह का नुकसान अंततः पत्तियों को या तो पर्ण निमेटोड क्षति या अन्य सूत्रकृमि द्वारा जड़ क्षति के परिणामस्वरूप हो सकता है। ग्राउंड बेड, उठे हुए बेड, या एक खेत में सवंमित क्षेत्र धीरे–धीरे बढ़ते हुए पैच के रूप में दिखाई दे सकते हैं जो संक्रमण के फैलने के साथ फैलते हैं। प्रारंभिक अवस्था में *मेलोडोगाइन* प्रजातियों के कारण रूट गल आमतौर पर अदृश्य होते हैं और उन पर ध्यान नहीं दिया जा सकता है, ये छोटे रूट गॉल हैं। अनार, अमरूद आदि फलों की पौधशालाओं में नर्सरी अवस्था में पत्तियों का कांसे का रंग दिखाई देते हैं, पतझड़ होना आम बात है ।

सूत्रकृमि

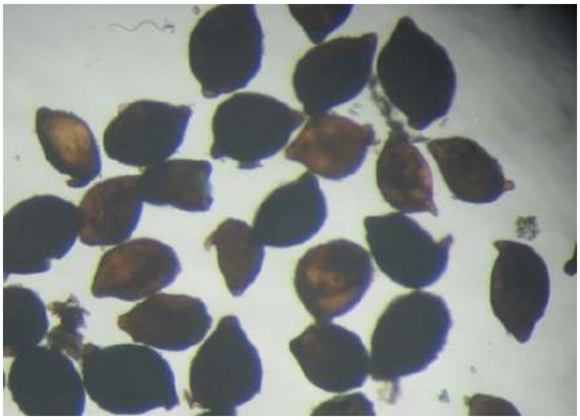

कोष्टक/पुट्टी सूत्रकृमि (*हीटरोडेरा एविनी*)

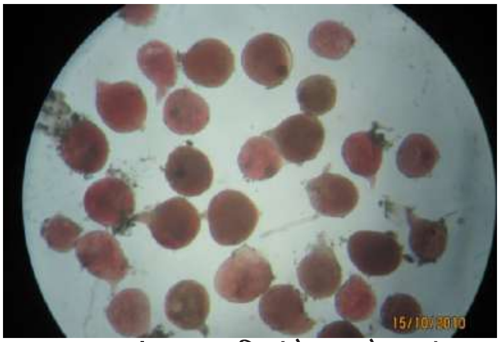

जड़–गांठ सूत्रकृमि (*मेलायडोगाइन*)

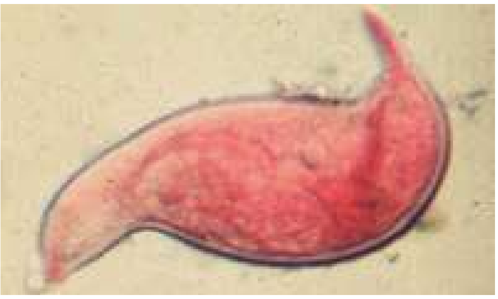

गुर्दानुमा सूत्रकृमि (*रोटीलेंकुलस रेनीफॉर्मिस*)

नींबू सूत्रकृमि (*ट्राइलेंकुलस सेमीपेनीट्रैन्स*)

जड़गांठ कृमि व फफूंद का पारस्परिक संबंध पौधों के रोग प्रक्रिया में अति मान्य है। फफूंद जो मिट्टी में रहती है व मिट्टी द्वारा उत्पन्न होने में जानी जाती है उनमें पौधों को सुखाने वाली व सड़न पैदा करने वाली प्रमुख है। सूत्रकृमि या फफूंद में कौन सा प्राणी हावी होकर फसल के रोग शैली को बदलता है। यह निर्भर करता है कि फसल के लिए कौन प्राथमिकता पाता है। इसके अलावा अजीव कारक एवं समय भी बीमारी शैली को परिवर्तित करते हैं। ऐसा भी जानते हैं कि सूत्रकृमि फफूंदों के लिए समानता व अनुकूलता का वातावरण प्रस्तुत करते हैं। आरम्भ में जो कि बाद में सूत्रकृमियों के लिए विनाशकारी सिद्ध होता है जिसे परिस्थिति में समझौता, सम्भोक्ता, विरोधी व दोस्ताना जैसा परिभाषित किया गया है। इस प्रकार

के जैविक सम्बन्ध रोक–टोक प्राकृतिक प्रणाली के अभिन्न अंग हैं और एक तंत्र को संतुलित रखने में अपनी भूमिका निभाते हैं। इसका तात्पर्य है कि किसी भी प्राणी की उत्पत्ति, फैलाव व गुणात्मकता एक सीमा तक होती है जिसकी एक त्रिकोणी खाद्य सहिंता के तहत नियोजित है। इस प्रकार जीवों में परस्पर संबंध प्रकृति की देन है। इन सम्बन्धों में बदलाव होता है यदि कोई दूसरा कारक/मध्यम में आता है जिससे सम्बन्धों में उलझन बन जाती है और घटना क्रम में संशोधन हो जाता है। फफूंद जो कि फसलों में व सड़न उत्पन्न करती है आमतौर पर संकाओं/गैर जरूरी जैसे जीव की श्रेणी में आती है जिनकी प्रवृत्ति अभिव्यक्ति में बदलाव का वातावरण नियोजित होता है। एक दूसरे को पहचानने की प्रक्रिया इस प्रकार के संबंध में स्थूल है। पौधों के ऊपर अब यह दिशा निर्देशित है या अपने आप बनता बिगड़ता है कहना मुश्किल होगा। लेकिन आपसी संबंध हाथ व दस्ताने जैसा है। जो आंशिक तौर से दर्शाता है इस प्रकार का संबंध इस प्रकार की प्रक्रिया जैविक व कार्बनिक तत्व मिट्टी की भौतिक–रासायनिक गुणों को प्रभावित करते हैं। समयानुसार जीवों में उन्नति पारम्परिक संबंधों का निवारण एक प्रकार से वैज्ञानिकों के लिए चुनौती भी है।

सूत्रकृमि व सूक्ष्म जीव मिलकर एक कुटिल रोग का परिणाम देते हैं एवं रोग से फसल की उपज में हानि आर्थिक दृष्टि से अधिक हो जाती है। सूत्रकृमि की संख्या अधिक होने पर सूत्रकृमि नाशक रसायन जैसे कार्बेफ्यूरान 1 किलोग्राम सक्रीय तत्व का उपयोग खेत की बिजाई के साथ लाइनों में करें तथा बीज उपचार कार्बेफ्यूरान 1 प्रतिशत से करने पर 1 रसायन का प्रयोग फसल के मध्य में और भी कर सकते हैं। सूत्रकृमि की संख्या को नियंत्रित करके फसल अन्य गैर जरूरी परजीवों को भी न्यूनतम किया जा सकता है परन्तु अन्य जीवों के नियंत्रण हेतु कुछ फफूंदनाशक का उपयोग अवश्य करें। इस प्रकार रोग का समेकित प्रबंधन कर सकते हैं।

बेस्ट मैनेजमेंट प्रैक्टिसेज (बीएमपी) : गाइड को उत्पादकों को असाधारण प्रबंधन प्रथाओं, विधियों और प्रक्रियाओं को पहचानने और बढ़ावा देने में मदद करने के लिए डिजाइन किया गया है। इन प्रबंधन प्रथाओं में से कोई भी नर्सरी आकार या स्थान की परवाह किए बिना लागू किया जा सकता है, और न्यूनतम पर्यावरणीय प्रभाव वाले पौधों का उत्पादन करने के लिए आवश्यक सक्रिय प्रबंधन प्रथाओं को लागू करते हुए कंटेनर और क्षेत्र में उगाए गए संयंत्र उत्पादकों को दक्षता और प्रभावशीलता के उच्च स्तर पर संचालित करने का अधिकार देता है।

स्वच्छ कंटेनरों में बिना कीट वाली मिट्टी में रोपने से पहले नेमाटोड दूषित नंगे जड़ को साफ करना एक अच्छा अभ्यास है। यदि रूट बॉल्स को पूरी तरह से साफ नहीं किया जाता है, तो दूषित नेमाटोड मिट्टी के कणों में जड़ों से कसकर चिपके रह सकते हैं, नेमाटोड की प्रभावशीलता को कम कर सकते हैं। नेमाटोड संगरोध नियमों की आवश्यकताओं को पूरा करने वाले दिशा–निर्देशों को को अपनाना सबसे अच्छा तरीका है। गैर–दूषित मिट्टी में और उठी हुई बेंचों या कंक्रीट स्लैब पर रखें कंटेनरों में स्वच्छ पौधों का उपयोग। ये अच्छी स्वच्छता प्रथाएं और अन्य स्त्रोतों से नेमाटोड संदूषण को रोकने वाली प्रक्रियाओं का कार्यान्वयन सर्वोत्तम व्यावहारिक साधन है। इसलिए यह आवश्यक है कि नर्सरी के पौधों को पादप परजीवी सूत्रकृमि से दूषित होने से बचाने के लिए सभी एहतियाती उपाय किए जाएं क्योंकि कोई उपचारात्मक विधि नहीं है और उपज के नुकसान की भरपाई किसी अन्य माध्यम से नहीं की जा सकती है। इसलिए, भारत में सभी फल उगाने वाले क्षेत्रों में नर्सरी मिट्टी और परिसर की कीटाणुशोधन अनिवार्य है। विभिन्न तरीकों में से रसायनों का उपयोग करते हुए मृदा धूमन नर्सरी मिट्टी में सूत्रकृमि उन्मूलन का प्रभावी साधन है।

अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद (800 किग्रा) को 2 किग्रा या 2 लीटर ट्राइकोडर्मा विराइड या टी. हार्जियनम या स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस या पी. लिलासिनस के साथ अच्छी तरह मिलाया जा सकता है। गोबर की खाद को छायादार और ठंडी जगह पर कंक्रीट स्लैब पर रखा जा सकता है। ढेर को हर हफ्ते 2–4 हफ्ते तक घुमाया जाता है। बायोएजेंट कार्बनिक पदार्थों पर गुणा करते हैं और बेहतर परिणाम देते हैं। छोटे किसानों को रोगमुक्त पौध उपलब्ध कराने के लिए व्यावसायिक नर्सरी उत्पादन प्रणाली (सार्वजनिक/निजी) विकसित की जानी चाहिए ।

संरक्षित खेती – एक वैज्ञानिक और आधुनिक खेती

दीक्षा गौतम[1] सोनू शेखावत[2] एवं कुमारी पुष्पा[3]
([1]उद्यान विकास अधिकारी, बागवानी विभाग, हरियाणा)
([2]शोधार्थी विद्यावाचस्पति, कृषि महाविद्यालय, कृषि विश्वविद्यालय,जौधपुर,राजस्थान)
([3]शोधार्थी विद्यावाचस्पति, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान– भा.कृ.अ.प., नई दिल्ली)

संरक्षित खेती के अनेक लाभ हैं और यह कृषि निवेश का अति महत्वपूर्ण घटक है जिसके द्वारा नमी संरक्षण पानी की बचत, उर्वरकों की बचत, खरपतवारों में कमी, जल और पोषक तत्वों सुनियोजित उपयोग करने में मदद प्रदान करता है।

हरित गृह प्रौद्योगिकी बेहतर स्थान उपयोग, अत्यंत दुर्गम मौसम स्थिति तथा अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में फसल उगाने में काफी उपयोगी है। पौधों के वृद्धि व विकास हेतु अनुकूल वातावरण प्रदान करता है तथा विभिन्न फसलों की अगेती पौध उत्पादन में सहायता करता है। हरित गृह कई प्रकार के होते हैंः

1. हाईटेक हरित गृह
2. प्राकृतिक वातानुकूलित हरितगृह
3. शेड नेट
4. वाकिंग टनल

पॉलीहाऊस में नर्सरी तैयार करने की उच्च तकनीकः

पॉलीहाऊस में पौधे तैयार करने के लिए सर्दियों में वास्तविक पौधे बनाने के समय से पहले ही पौधे लगा दिए जाते हैं। वे पौधे ज्यादा स्वस्थ, ज्यादा बड़े तथा बीमारियों के लिए सहनशील होते हैं। पॉलीहाऊस में सर्दियों में सब्जियों के हाईब्रिड बीजों को बाहर की अपेक्षा कम मात्रा की आवश्यकता पड़ती है।

सुदृढ़ जड़ों के लिए माध्यम/मीडिया

मुख्य रूप से कोकोपीट, वर्मीकुलाईट एवं परलाईट की आवश्यकता ग्रीन पॉलीहाऊस में सुदृढ़ जड़ें बनाने के लिए होती है। इन मिडियाओं को सामान्यतः 3:1:1 के अनुपात में मिलाया जाता है तथा इस मिश्रण से ट्रे में बीज उगाए जाते हैं।

ट्रे के प्रकार

दो तरह की प्लास्टिक ट्रे आमतौर पर बाजार में मिलती हैं जिनमें नर्सरी के छोटे पौधे तैयार किए जात हैं। पहले प्रकार की ट्रे में प्रत्येक केविटी 3.75 सै.मी. (1.5 इंच) व्यास का होता है। जिसमें 187 केविटियां होती हैं। दूसरी प्रकार की ट्रे में केविटी का आकार छोटा यानि कि 2.5 सै.मी. (1 इंच) व्यास का होता है। इस ट्रे में केविटियों की संख्या 345 होती है। इन ट्रे के कई लाभ हैं–जैसे कि ठीक बीजों का जमाव, प्रत्येक पौधे के लिए समान व अलग–अलग जगह। इन विशेषताओं के कारण ट्रे की केविटियों में लगे पौधे ज्यादा स्वस्थ होते हैं, ये पौधे ज्यादा संख्या में जीवित रहते हैं तथा छोटे पौधे की बढ़वार लगभग एक समान पाई जाती है। इन पौधों का रखरखाव ज्यादा आसान होता है। थोड़ी जगह में बहुत ज्यादा पौधे तैयार हो जाते हैं तथा इन पौधों का स्थानांतरण ज्यादा आसान व सुविधाजनक होता है।

बीजों को बोने की विधि

पहले ट्रे में ऊपरलिखित मीडिया या मिश्रण को केविटियों में भरा जाता है। तदुपरांत प्रत्येक केविटी में एक बीज बो दिया जाता है। अमरूद, आंवला, पपीता आदि के लिए आमतौर पर हम 98 केविटी वाली ट्रे का उपयोग करते हैं।

खीरा, खरबूजा, टमाटर एवं बैंगन के लिए आमतौर पर हम 187 केविटी वाली ट्रे का उपयोग करते हैं। इस ट्रे में प्रत्येक केविटी का आकार 3.7 सै.मी. (1.5 इंच) व्यास का होता है लैट्यूस, बंदगोभी व मिर्ची के लिए हम 345 केविटियों वाली ट्रे का उपयोग करते हैं। इस ट्रे में प्रत्येक केविटी का आकार 2.5 सै.मी. (1 इंच) व्यास का होता है। स्वस्थ पौध (पनीरी) तैयार करने के लिए उपयुक्त तापमान सर्दियों में 20 डिग्री सैं.ग्रे. तथा गर्मियों में 30 डिग्री सै.ग्रे

होना चाहिए। केविटियों में बीज बोने के बाद उन पर छोटे स्प्रिंकलरों द्वारा एकसार छिड़काव किया जाता है। आपेक्षित आर्द्रता लगभग 100 प्रतिशत हो जाती है। जब केविटियों में नमी का आवश्यकता हो तो बत फिर से सिंचाईयां करते रहना चाहिए। एन.पी.के. (नत्रजनः फॉस्फोरसः पोटाश) को 1:1:1 के अनुपात में मिलाकर सर्दियों में 140 पी.पी.एम. की दर से तथा गर्मियों में 70 पी.पी.एम. की दर से खाद देनी चाहिए। इस प्रकार बने खाद के घोल का छिड़काव प्रत्येक सप्ताह किया जाना चाहिए। ऐसा करने से पोषक तत्वों की मात्रा समान रूप से सभी पौधों को मिलती रहती है।

उचित स्थानांतरण के लिए एवं सब्जियों की पौध तैयार करने की विधि

सर्दी के मौसम में ग्रीनहाऊस में पौधे तैयार करने के लिए बीज बोने से स्थानांतरण तक खीरे के लिए 25–28 दिन व खरबूजे के लिए 30–32 दिन लगते हैं जबकि टमाटर व बैंगन की पौध सर्दियों में बिजाई के बाद 30–32 दिनों में तैयार हो जाती है। गर्मी के मौसम में बेलों वाले परिवार के पौधों की तैयार नर्सरी करने के लिए केवल 12–15 दिन लगते हैं।

पॉलीहाऊस एवं ग्रीनहाऊस फसलों में जड़गांठ रोग समस्या

रोग का जनकः जड़ गांठ सूत्रकृमि

प्रभावित फसलेः खीरा, टमाटर, शिमला मिर्च, जरबेरा, गुलदाउदी, गुलाब आदि।

लक्षण

- पौधे बोने व कमजोर रह जाते हैं।
- पत्ते पीले पड़ जाते हैं। सूत्रकृमि पौधों में पौषक तत्वों की कमी के लक्षण दिखाई देते हैं।
- जमीन में नमी के बावजूद भी पौधे मुरझाए हुए (दोपहर के समय) दिखाई देते हैं।
- पैदावार में कमी आ जाती है।
- जड़ों पर गांठे बन जाती है।

नियन्त्रण

- मई–जून के महीनों में 10–15 दिन के अन्तराल पर दो–तीन गहरी जुताई करें। तत्पश्चात् जून–जुलाई में जमीन को हल्का पानी देकर 25 माईक्रोमीटर की पारदर्शी पॉलिथीन शीट से ढ़कें।
- टमाटर की फसल में जड़ गांठ सूत्रकृमियों के नियन्त्रण के लिए ट्राइकोडर्मा विरिडी 20 ग्राम प्रति वर्गमीटर की दर से नीम की खली या गोबर की खाद या वर्मी कम्पोस्ट (100 ग्राम प्रति वर्गमीटर) में मिला कर फसल की रोपाई से एक सप्ताह पहले मिट्‌टी के ऊपरी भाग में अच्छी तहर मिलाकर हल्का पानी दें।

अमरूद में फसल नियंत्रण: विधि एवं सलाह

मधुबाला ठाकरें, ए. नागराजा, चाव्लेश कुमार एवं अमित कुमार गोस्वामी
फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग,
भा.कृ.अनु.प.– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली, 110 012

अमरुद का नाम लेते ही मुँह खट्टे–मीठे स्वाद से भर जाता है। अमरुद को पेरू, बिही इत्यादि नामों से भी जाना जाता है। अमरूद एक स्वादिष्ट एवं पौष्टिक फल है। फलों में यह विटामिन–सी का तीसरा सबसे बड़ा स्त्रोत है तथा कैल्शियम एवं रेशों से भी भरपूर है। गुलाबी गूदे वाला अमरुद में लाइकोपीन नामक एंटीऑक्सीडेंट पाया जाता है जो कि स्वास्थय के लिए बहुत ही लाभदायक होता है। इसके न सिर्फ फलों का बल्कि पेड़ के सभी भागों का उपयोग बहुत–सी बीमारियों को ठीक करने के लिए किया जाता है और यदि किसानों के लाभ की दृष्टि से देखा जाए तो भी इसकी बागवानी तय मापदंडो पर खरी उतरती है। यही वजह है कि किसानों का इस फल की बागवानी की तरफ रुझान बढ़ रहा है। यद्यपि अमरुद की उत्पत्ति भारत में नहीं हुई है किन्तु फिर भी इसका यहाँ सफलतापूर्वक उत्पादन किया जाता है। और भारत अमरुद उत्पादन में अग्रणी स्थान रखता है। कुछ बहुत कम या अधिक तापमान एवं वर्षा वाले स्थानों को छोड़कर इसकी बागवानी देश के सभी भागों में होती है।

अमरुद में मुख्यतः दो बार फल आते हैं वर्षा ऋतु एवं शीत ऋतु। फरवरी में भी कुछ फल मिलते हैं पर इसका परिमाण कम होता है। सर्दियों में तापमान कम होने की वजह से पौधों की वानस्पतिक वृद्धि नहीं होती है। फरवरी माह में जैसे ही तापमान बढ़ना शुरू होता है तो पौधों में नए प्ररोह निकलने शुरू हो जाते हैं। इन प्ररोहों में कलियाँ निकलती हैं जिसमें अप्रैल –मई माह में फूल खिलने लगते हैं। इन फूलों में फल बनते हैं जो कि वर्षा ऋतु में फल देते हैं। वर्षा ऋतु की फसल का परिणाम अधिक होता है क्यों कि शीत ऋतु में वानस्पतिक वृद्धि ना होने की वजह से पौधे की काफी ऊर्जा संचित रहती है जिससे पौधे में बहुत सारी कलियाँ आती हैं जिनमें फल बनते हैं। इसके विपरीत जब वर्षा ऋतु में शीत ऋतु की फसल की कलियाँ लगती है तो उस समय बारिश की वजह से पौधों में वानस्पतिक वृद्धि चालू रहती है साथ ही साथ पौधों पर फल भी लगे होते हैं। फलस्वरूप पौधों की ऊर्जा का वितरण हो जाता है। परिणामस्वरुप शीत ऋतु में फसल का परिणाम कम होता है। वर्षा ऋतु और शीत ऋतु की फसल की गुणवत्ता की बात की जाए तो शीत ऋतु की फसल अधिक स्वादिष्ट और पौष्टिक होती है तथा इसमें कीट एवं बीमारियों का प्रकोप भी कम होता है। तुलनात्मक रूप मे वर्षा ऋतु में फल उतने स्वादिष्ट नहीं होते हैं तथा कीट के अंतर्गत फल मक्खी का सबसे ज्यादा प्रकोप रहता है। इसकी वजह से कभी–कभी तो फल खाने योग्य नहीं रहते। इसलिए किसान भाई ज्यादातर सर्दियों की फसल लेना पसंद करते हैं। अमरुद में सिर्फ सर्दियों की फसल लेना और वर्षा ऋतु की फसल ना लेना फसल नियंत्रण या बहार लेना कहलाता है। यहाँ पर हम "फलयुक्त प्ररोह में एक जोड़ा पत्ती कृंतन " द्वारा अमरुद में फसल नियंत्रण अर्थात सर्दियों की फसल लेने की बात करेंगे।

फलयुक्त प्ररोह में एक जोड़ा पत्ती कृंतन : इस विधि में कॉट–छॉट (प्रूनिंग) के द्वारा फसल नियंत्रण किया जाता है। इसमें उन्हीं प्ररोहों को कॉटा जाता है जिनमें कली या फल होता है। ऐसे नए प्ररोहों को उनके हल्के हरे रंग के द्वारा आसानी से पहचाना जा सकता है। प्ररोह में जहाँ तक हरा रंग होता है वह नया प्ररोह होता है तथा उसके नीचे का भूरा रंग का प्ररोह का हिस्सा पुराना होता है। दूसरे शब्दों में किसी भी प्ररोह में भूरे रंग के ऊपर जहाँ से हल्का हरा रंग प्रारम्भ होता है वह नया प्ररोह होता है उसके आधार का एक जोड़ी पत्ता छोड़कर शेष ऊपर का भाग काट देना चाहिए। यही फलयुक्त प्ररोह में एक जोड़ा पत्ती कृन्तन है। चूँकि इस विधि में फलयुक्त प्ररोह में प्रूनिंग कर रहे हैं इसलिए जो भी कलियाँ एवं फल ऊपरी भाग में

हैं वो तो गिर जाएगी। जिसके फलस्वरूप वर्षा ऋतु की फसल कम हो जाएगी। इसके साथ ही यदि नए प्ररोह के आधार के जोड़े की पत्तियाँ बीच में कली है तो उससे कुछ परिणाम में वर्षा ऋतु में भी फल मिलेंगे। चूँकि वर्षा ऋतु के समय पेड़ पर फलों की संख्या कम होगी तो उनका आकार भी अच्छा होगा। तथा किसानों को कुछ आय भी होगी। प्रूनिंग के बाद नीचे गिरी पत्तियाँ पलवार का कार्य करती है। तथा कार्बनिक पदार्थ भी देती है। फसल नियंत्रण के अलावा इस विधि से फसल नियंत्रण का लाभ यह है कि इससे वृक्ष के आकार में बिना प्रूनिंग किये वृक्ष की तुलना में 50% तक की कमी हो जाती है। इस तरह से यह विधि सघन बागवानी के लिए भी उत्तम है।इससे एक ही बार प्रूनिंग करने से कटाई– छंटाई तथा फसल नियंत्रण दोनों कार्य हो जाएंगे। और इस तरह किसान अपना खर्चा भी बचा सकते हैं। इस विधि का एक और सबसे बड़ा फायदा यह है कि इसे किसी भी जलवायु में किया जा सकता है। किसान प्रूनिंग के समय को अपने क्षेत्र में अप्रैल–मई में पड़ने वाले तापमान के आधार पैर बदल सकते हैं। क्योंकि तापमान, कलियों की उत्पत्ति के समय को निर्धारित करना है।

अमरुद में फसल नियंत्रण के और भी तरीके हैं जिन्हे किसान भाई अपनी सुविधा के हिसाब से अपना सकते हैं। जैसे कि कलियों को हाथ से तोड़कर भी फसल नियंत्रण किया जा सकता है। ऐसे क्षेत्र जँहा आद्रता काम होती है वहाँ यूरिया का 10–15% घोल का छिड़काव करके फसल नियंत्रण किया जा सकता है।

अमरुद में फलयुक्त प्ररोह में एक जोड़ा पत्ती कृन्तन

बटन मशरूम की आधुनिक खेती

शशि मीना एवं रमेश चन्द मीना
पादप कार्यिकी संभाग,
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

भारत जैसे देश में जहां की अधिकांश जनसंख्या शाकाहारी हैं यहां पर मशरूम का प्रयोग सब्जी के रूप में किया जाता है। मशरूम को खुम्बी के नाम से भी जाना जाता है। मशरूम प्रोटीन से भरपूर होती है एवं अन्य पोषण तत्वों के कारण इसका महत्व बहुत अधिक हो गया है। मशरूम स्वास्थ्य के लिए बहुत अधिक लाभदायक है क्योंकि इसके अन्दर रेशा और फोलिक अम्ल होते हैं। प्रोटीन से भरपूर और स्वास्थ्य के लिए लाभकारी होने के कारण इसका कारोबार बाजार में बढ़ गया है। इसलिए भारत में लोग मशरूम की खेती की तरफ अधिक आकर्षित हो रहे हैं।

भारत में मशरूम उत्पादकों के दो समूह हैं पहला जो मशरूम की खेती मौसम के अनुसार करता तथा दूसरा जो सारे साल मशरूम उत्पादन करते हैं। मशरूम मौसमी खेती के रूप हिमाचल प्रदेश, जम्मू कश्मीर, उत्तर प्रदेश की पहाड़ियों, उत्तर पश्चिमी पहाड़ी क्षेत्रों, तमिलनाडु के पहाड़ी भागों में 2–3 फसलों के रूप में तथा भारत के उत्तर पश्चिमी समतल क्षेत्रों में इसे जाड़े की फसल के रूप में भी उगाया जाता है।

व्यवसायिक तौर पर तीन प्रकार की खुम्बी उगाई जाती है। जैसे बटन खुम्बी, ढींगरी खुम्बी और धान पुआल या पेडीस्ट्रा खुम्बी। इन तीनों में से बटन खुम्बी सबसे अधिक लोकप्रिय है। खुम्बी को उगाने के लिए हवादार कमरे या सेड की आवश्यकता होती है।

भारत में मशरूम उगाने का सही समय

भारत में मशरूम को उगाने के लिए ऐसे मौसम की आवश्यकता होती है जिसमें ज्यादा सर्दी न पड़े और वातावरण में नमी भी बनी रहे। मशरूम अधिक ठण्डे मौसम में नहीं उगाई जाती हैं। मशरूम की खेती के लिए उपयुक्त समय है अक्टूबर से मार्च के महीने। इन छः महीनों में दो फसलें उगाई जाती हैं। बटन खुम्बी के लिए शुरूआती तापमान 22 से 26 डिग्री सेल्सियस आवश्यक रहता है। इस तापमान पर कवक जाल की वृद्धि अधिक होती है। बाद में 14 से 18 डिग्री सेल्सियस तापमान ही उपयुक्त रहता है। अगर तापमान इससे कम रहता है तो फलनकाय की बढ़वार की गति धीमी पड़ जाती है और 18 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान भी खुम्बी के लिए हानिकारक रहता है। मशरूम की अच्छी उपज के लिए 90 प्रतिशत नमी अधिक आवश्यक है। इसे बाहर या कमरे (खुले) के अन्दर दोनों ही जगह पर लगाया जा सकता है।

बटन मशरूम की खेती के लिए कम्पोस्ट बनाना और पेटियों या थैलियों में भरना

बटन मशरूम की खेती के लिए विशेषतः दो प्रकार से कम्पोस्ट खाद तैयार की जाती है– साधारण विधि तथा निर्जिलीकरण विधि द्वारा। जब कम्पोस्ट तैयार हो जाती है तो इसको लकड़ी की पेटी या रैक में 6 से 8 इंच मोटी परत या तह बिछा देते हैं। यदि बटन खुम्बी को पोलीथीन की थैलियों में उगाना चाहते हैं तो कम्पोस्ट खाद को बीजाई या स्पानिंग के बाद ही थैलियों में भरें। थैलियों में हवा का आगमन बनाए रखने के लिए 2 मिली मीटर व्यास के छेद थोड़ी–थोड़ी दूरी पर कर दें।

बटन मशरूम की बीजाई या स्पॉनिंग

अच्छे उत्पादन के लिए गुणवत्तायुक्त बीज का प्रयोग करना अति आवश्यक है। मशरूम के बीज को स्पॉन कहते हैं। मशरूम की बीज एक माह से ज्यादा पुराना भी नहीं होना चाहिए। बटन मशरूम की खेती करने के लिए बीज की मात्रा कम्पोस्ट खाद के वजन के 2 से 2.5 प्रतिशत होनी चाहिए। इस बीज को कम्पोस्ट से भरी पेटी पर बिखेर

दें और उस पर 2 से 3 सेमी. मोटी कम्पोस्ट की एक परत और चढ़ा दें।

बीज बोने के बाद मशरूम की देखभाल

1. कवक जाल का बनना– बीजाई करने के पश्चात पेटी और थैलियों को खुम्बी कक्ष में रख दें और उसमें पर्याप्त नमी बनाए रखने के लिए पुराने अखबार बिछाकर पानी से भिगो दें। अथवा कमरे में भी पर्याप्त आर्द्रता बनाए रखने के लिए कमरे के फर्ष व दीवारों पर भी पानी का छिड़काव जरूर करें। कवक जाल बनने के लिए कमरे का तापमान 22 से 26 डिग्री सेल्सियस तथा नमी 80 से 85 प्रतिशत के बीच होनी चाहिए। कवक जाल बनने के लिए 15 से 20 दिन लगते हैं। इस समय खुम्बी को ताजा हवा की आवश्यकता नहीं होती अतः कमरे को बन्द ही रखें। इस समय कवक जाल बनने के लिए तापमान और नमी अहम भूमिका निभाते हैं।

2. केसिंग करनाः– इसे परत चढ़ाना भी कहते हैं। गोबर की सड़ी हुई खाद एवं साधारण मिट्टी को बराबर मात्रा में अच्छी तरह से छानकर मिला लें परत चढ़ाने से पहले इसे मिश्रण को 5 प्रतिशत फर्मलीन या भाप से निर्जीवीकरण कर लें। जब कवक जाल पूरी तरह से फैल जाए तो इसके ऊपर उपरोक्त निम्नलिखित ढंग से तैयार की गई खाद को 4–5 सेमी. मोटी परत बिछा दें। परत चढ़ाने के तीन दिन बाद खुम्बी कक्ष का तापमान 14–18 डिग्री सेल्सियस के बीच व आर्द्रता 80–85 प्रतिशत के बीच स्थिर रखें। इस समय बटन मशरूम की अच्छी पैदावार के लिए ताजे हवा और प्रकाश की जरूरत होती है। अतः इस समय कक्ष की खिड़कियां और रोशनदान खोलकर रखें। यह समय फलनकाय के लिए होता है।

खुम्बी फलनकाय का बनना तथा उनकी तुड़वाई

खुम्बी बीज रोपण के 35–40 दिन बाद या मिट्टी की परत चढ़ाने के 15–20 दिन बाद कम्पोस्ट के ऊपर मशरूम के सफेद फलनकाय दिखाई देने लगेगें। जोकि अगले 4–5 दिन बाद उनका आकार बटन के आकार का हो जाता है जिस कारण उसको बटन मशरूम के नाम से जाना जाता है।

खुम्बी की तुड़वाई दो प्रकार से की जा सकती है। पहले हाथ की उंगलियों से हल्का दबाकर और घुमाकर तोड़ लेते हैं। खुम्बी की तुड़ाई तब की जाती है जब टोपी कसी हुई हो और झिल्ली साबुत हो। दूसरा तरीका है चाकू का प्रयोग करके। इसमें कम्पोस्ट की सतह से खुम्बी को चाकू से काटकर भी निकाला जा सकता है। इस प्रकार हम एक फसलचक्र (6 से 8 सप्ताह) में खुम्बी की 5–6 फसल प्राप्त कर सकते हैं।

मशरूम की पैदावार एंव भण्डारण

सामान्य रूप से 8 से 9 किग्रा. खुम्बी प्रति वर्ग मीटर में पैदा की जा सकती है। 100 किग्रा. कम्पोस्ट से लगभग 12 किग्रा. खुम्बी का आसानी से पर्याप्त उत्पादन किया जा सकता है।

भण्डारण करने के लिए निम्न बातों का आवश्यक ध्यान रखना चाहिए। जैसे खुम्बी तोड़ने के बाद उसे साफ पानी से अच्छी तरह धोना चाहिए तथा बाद में 25 से 30 मिनट के लिए उनको ठण्डे पानी में भिगो दें। अगर खुम्बी को ताजा ही प्रयोग में लाया जाए तो सर्वश्रेष्ठ होता है परन्तु इसका भण्डारण फ्रिज में 5 डिग्री सेल्सियस तापमान पर 4–5 दिनों के लिए भी किया जा सकता है।

बाजार में खुम्बी को बेचने के लिए पोलीथीन की थैलियों में पैक किया जाता है। बाजार में ज्यादा सफेद मशरूम की मांग अधिक होने के कारण ताजा बिकने वाली अधिकांश खुम्बियों को पोटेशियम मेटाबाइसल्फेट के घोल में उपचारित किया जाता है। बटन मशरूम का खुदरा मूल्य 100–125 रूपये प्रति किग्रा. रहता है। शादी–विवाह जैसे अवसर पर इसकी मांग अधिक होने के कारण इसका मूल्य 150 रूपये प्रति किग्रा. तक पहुंच जाता है।

ध्यान रखने योग्य बातें

1. हम सब यह बहुत भलीभांति जानते हैं कि अच्छी पैदावार के लिए अच्छे बीज और अच्छी कम्पोस्ट की आवश्यकता होती है। अतः कम्पोस्ट बनाते समय विशेष सावधानी बरतनी चाहिए। यदि किसी कारणवश खुम्बी की फसल में कीड़ा या बीमारी हो जाए तो फसल पूर्णतः या आशिंक रूप से खराब हो सकती है।

2. मशरूम की फसल विभिन्न प्रकार की बीमारियों से ग्रसित हो सकती है जैसे सूखे बुलबुले, गीले बुलबुले या सबरीना सड़न। अतः मशरूम कक्ष को अच्छी तरह से साफ रखना चाहिए एंव कमरे में ताजा हवा का आवागमन लगातार बना रहना चाहिए और नमी भी तय पैमाने पर होनी चाहिए।
3. मशरूम उगाने के लगभग 10 से 15 दिनों के अन्दर कम्पोस्ट पर मैंकोजेब दवा का छिड़काव अवश्य करें। ऐसा करने से कम्पोस्ट पर फफूंदी नहीं उगती और अच्छी क्वालिटी की मशरूम पैदा होगी।
4. मशरूम की फसल बैक्टीरियल बीमारी से भी ग्रसित हो सकती है। अतः इस प्रकार की बीमारियों से बचाने के लिए नमी और सफाई का खास ध्यान रखना होता है और जरूरत पड़ने पर ब्लीचिंग पाउडर की डेढ़ ग्राम मात्रा को 10 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

किस महीने में कौन सी मशरूम

1. मार्च से अगस्त के बीच पेडीस्ट्रा मशरूम की खेती करें।
2. अक्टूबर से मार्च के बीच बटन मशरूम की खेती।
3. अगस्त से लेकर अप्रैल महीने के बीच ढींगरी या ओयस्टर मशरूम उगाने का उचित समय होता है।

लेखकों से...

1. अपने तकनीकी एवं लोकप्रिय लेख हिन्दी में टाइप करवाकर भेजें।
2. रचना पृष्ठ के एक ओर उचित हाशिया और पंक्तियों के बीच स्थान छोड़कर सम्पादक, प्रसार दूत के पास यथा समय भेजें।
3. वर्ष 2015 से प्रसार दूत का अंक त्रैमासिक किया गया है। लेखकों से अनुरोध है कि प्रथम अंक के लिए प्रकाशनार्थ सामग्री 30 जनवरी, द्वितीय अंक 30 अप्रैल, तृतीय अंक 31 जुलाई तथा चतुर्थ अंक 31 अक्तूबर तक अवश्य भेज दें।
4. तकनीकी पर दी गई जानकारी की पूरी जिम्मेदारी लेखक की होगी। रचना को प्रकाशित करने या न करने का पूरा अधिकार सम्पादक मंडल को होगा।

प्रसार दूत का प्रकाशन समय

प्रथम अंक मार्च, द्वितीय अंक जून, तृतीय अंक सितम्बर और चतुर्थ अंक दिसम्बर में प्रकाशित होगा।

वार्षिक शुल्क 150/- मनीऑर्डर द्वारा भेजें।

शुल्क और सामग्री भेजने एवं पत्रिका मंगवाने का पता

प्रभारी अधिकारी
कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)
भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012
फोन: 011-25841670, 25846233, 25841039, 25803600
पूसा एग्रीकॉम: 1800 11 8989 (नि:शुल्क)
ई-मेल: incharge_atic@iari.res.in

पाठकों से...

प्रसार दूत में प्रकाशित किसी भी तकनीकी के विषय में अंश और समाधान हेतु आपके पत्रों का स्वागत है। विषयों पर अधिक जानकारी के लिए लेखक से सीधे भी सम्पर्क कर सकते हैं।

किसानों से...

यदि आपकी खेती व पशु-पालन संबंधी कोई विशेष समस्या है, तो लिखकर भेजें। हम प्रसार दूत के माध्यम से उसका समाधान आप तक पहुंचाएंगे।

अन्त में ...

आपकी खुशहाली ही हमारी सफलता है।

निदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012 द्वारा प्रकाशित तथा
मैसर्स एम एस प्रिंटर्स, सी-108/1 बैक साइड नारायणा इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110028, द्वारा मुद्रित
फोन: 7838075335, 9899355565, 9899355405,